योगवाणी

वर्ष ५१, मार्च २०२६

योगवाणी

वर्ष ५१, मार्च, २०२६

आर.एन.आई. २९०७५/७६

''मानव जीवन में योग की साधना की परम उपयोगिता सहज सिद्ध है। योग ही एक ऐसा निरपेक्ष साधन मार्ग है जिसके आश्रय में सर्व सामान्य को जीवन की व्यावहारिकता और सच्चिदानन्द स्वरूप का ज्ञान सुलभ होता है''

राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

वार्षिक सदस्यता : १२५/-
द्विवार्षिक सदस्यता : २५०/-
पंचवार्षिक सदस्यता : ६००/-
आजीवन सदस्यता : १२००/-
एक प्रति का मूल्य : १५/-

मुद्रक:
मोती पेपर कनवर्टर्स
डी-4/1, सेक्टर 13
गीडा, गोरखपुर
दूरभाष : 0551-2580093

विषयानुक्रम

पृष्ठ

जीवनामृत

श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः ०२

योगामृत ०३

गोरखवाणी ०४

राशियों का मासफल ०५

नाथपन्थ एवं दर्शन

भारतीय ज्ञान परम्परा एवं नाथ पन्थ ०७
- प्रो. हरिप्रसाद अधिकारी

योग क्या है? ११
- आचार्य सुभाष विद्यालंकार

सपेरे अथवा कालबेलिए : १४
नाथपन्थ के सन्दर्भ में- श्री ब्रजेन्द्र कुमार सिंघल

धर्म, संस्कृति एवं अध्यात्म

पुराणों के विषय में कुछ विशेष बातें- ३०
आचार्य नवनीत

संस्थापक सप्ताह समारोह - २०२५ ३३
- डॉ0 नीतीश शुक्ल

चतुर्थ आवरण

परम पवित्र तुलसी के औषधीय उपयोग
- श्रीभागवत पाण्डेय 'सुधांशु'

॥ ॐ नमो भगवते गोरक्षनाथाय ॥

योगवाणी

(धर्म-संस्कृति, अध्यात्म एवं योग प्रधान मासिक पत्रिका)

संस्थापक-सम्पादक

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ

प्रधान सम्पादक

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ

प्रबन्ध सम्पादक

डॉ. प्रदीप कुमार राव

सम्पादक

डॉ. प्रांगेश कुमार मिश्र

प्रकाशक

श्री गोरखनाथ मन्दिर

गोरखपुर - २७३०१५

web: www.gorakhnathmandir.in

E-mail: gorakhnathmandir@yahoo.com

दूरभाष : (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४

।। श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः ।।

निजं दैवद्वारं, विविदिषुमना धीरधिषणो,
दरीदेवागारोपवनतटिनीभूशिखरिषु ।
निरालम्बं भ्राम्यन्निजजनिधरित्रीपरिवृढं,
सदा ध्यायं ध्यायं मुदितमनसाऽसौ ददृशिवान् ॥१॥

गुरुः श्रीगोरक्षोऽनवधिकरुणासागरसुधा-,
च्छटावर्षैस्तातं, विजनभुवि सिञ्चन् समगमत् ।
प्रदर्श्य स्वं रूपं, किमपि मनुमादिश्य रसना-
तले सच्चित्तत्त्वं, किमपि परिलिख्यैनमवदीत् ॥२॥

गिरां देवी बालाननकमलसद्म भवतु ते,
धराधीशश्रेणी चरणतलपीठे लुठतु ते ।
भवत्वं पूर्णायुर्जगति महिमा ते प्रसरतात्,
सुतांल्लब्ध्वा धीरान् कुरु सुत! धराचङ्क्रममिति ॥३॥

ततः पूर्णानन्दामृतसरसि मग्नेन मनसा,
पिता मूर्ध्ना बद्धाञ्जलिपुटयुजा पादकमलम् ।
गुरोर्वारं वारं, निजनियतिरूपस्य सपदि,
प्रणम्योद्दामार्थप्रचुरवचसाऽवन्दत पुनः ॥४॥

भजे श्रीगोरक्षं, भुवि सकलसिद्ध्येकभवनं,
विरञ्चिश्रीवत्सिस्मरहरमहोविग्रहधरम् ।
धरापुत्रं लोकोद्धरणधिषणाध्यासिततनुं,
महासामर्थ्याब्धिं, भवजलधिपारीभवधियम् ॥५॥

योगामृत

गोरक्ष उवाच :-

गुरूजी ! कौन सो आसन ? कौन सो ज्ञान ?
किस विधि बाला धरिये ध्यान ?
कसे अवगति का सुख लहे ?
सतगुरू होय सो बुझाय कहे ? ॥ ८१॥

भावार्थ- हे गुरु ! किस आसन से कैसा ज्ञान ले, साधक किस प्रकार ध्यान धरे। परमानन्द की प्राप्ति कैसे होय?

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू ! सन्तोष आसन विचार सो ज्ञान,
काया तजि करि धरिये ध्यान।
गुरूमुख अवगति की सुख लहे,
ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे॥ ८२॥

भावार्थ- हे साधक ! सन्तोष का आसन, विवेक-ज्ञान, शरीर से आसन, प्रत्याहारादि साधना सहित ध्यान करने और गुरु उपदेश निष्ठा से परमांनन्द की प्राप्ति होती है।

गोरक्ष उवाच :

गुरूजी ! कौन सो सन्तोष ? कौन सो विचार ?
कौन सो ध्यान काया के पार ?
कैसे मनसा इनमें रहे ?
सतगुरू होय सो बुझाय कहे ॥ ८३॥

भावार्थ- हे गुरु ! सन्तोष कैसा विचार कैसा ? शरीर से पार ध्यान कैसा ? इनमें मन कैसे रहे ?

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू ! निर्भय सन्तोष अभय विचार दुहूं में ध्यान काया के पार।
गुरू मुख मनसा इनमें रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे॥ ८४ ॥

भावार्थ- हे शिष्य ! निर्भय सन्तोष, अनुभव विचार और ब्रह्मरन्ध्र (दशवें) द्वार का ध्यान काया के पार का है। गुरुमुखी सुगरा शिष्य मन इनमें अन्तर्हित रहता है।

(गोरक्ष-मत्स्येन्द्र संवाद)

गोरखवाणी

इहां ही आछै इहां ही अलोप। इहां ही रचिलै तीनि त्रिलोक।
आछै संगै रहै जू धा। ता कारणि अनंत सिधा जोगेस्वर हूवा ॥ ३ ॥

वह परमात्मा इस शून्य स्थान (ब्रह्मरंध्र) में निर्विकार चेतन तत्त्व के रूप में निराकार है, अभिव्यक्त होकर अनभिव्यक्त सा है। यह ब्रह्मरंध्र सृष्टि का केंद्रस्थल, संपूर्ण अविकल ब्रह्मांड का वाचक है, स्वरूप है, यही पिंड में ब्रह्मांड की संस्थिति का तात्त्विक अनुभव ही जीवात्मा और उसी के सर्वथा अभिन्न अंशी परमात्मा का सामरस्य है, रसबोध है। इसी परब्रह्म का साक्षात्कार कर परमात्म अमृतरस, चैतन्य महारस का आस्वादन कर संत सिद्ध योग-मार्ग आश्रय से, शरणागति अथवा प्रपत्ति से योगेश्वरपद में प्रतिष्ठित हो जाते हैं।

वेद कतेब न षांणी बांणी। सब ढंकी तलि आंणी।
गगनि सिषर महि सबद प्रकास्या। तहं बूझै अलख बिनांणी ॥ ४॥

परमात्मा के स्वरूप का वर्णन शब्द साक्ष्य के धरातल पर उपलब्ध है और वेद में वह नेति-नेति के रूप में वर्णित है, पर अनुभव अथवा साक्षात्कार तो परमज्ञान, आत्मविज्ञान से ही संभव होता है। सभी प्रकार की वाणी को उसके तात्त्विक स्वरूप-निरूपण में मौन हो जाना पड़ता है। गगन-मंडल, ब्रह्मरंध्र में समाधि परमात्मज्ञान से ही उस ब्रह्म का, अलखनिरंजन, जगदाधार परमात्मा का साक्षात्कार अथवा स्वरूपानुभव प्राप्त करना चाहिए।

■

राशियों का मासफल

दिनांक ०१ मार्च २०२६ से ३१ मार्च २०२६ तक

बारह राशियों का फलादेश

*डॉ0 दिग्विजय शुक्ल

मेषः इस माह में आपके कार्यक्षेत्र में सक्रियता बढ़ेगी। नई योजनाओं एवं आर्थिक दृष्टि से खर्च बढ़ सकता है। अतः सन्तुलन बनाए रखें। पारिवारिक वातावरण सामान्य रहेगा। स्वास्थ्य में थकान एवं सिरदर्द की शिकायत हो सकती है।

वृषभः यह माह आर्थिक मजबूती प्रदान करने वाला रहेगा। आय के नए स्रोत बन सकते हैं। पारिवारिक जीवन सुखद रहेगा तथा दाम्पत्य जीवन में मधुरता बनी रहेगी। व्यवसाय में विस्तार के योग हैं। स्वास्थ्य सामान्य रहेगा, किन्तु खान-पान में संयम आवश्यक है।

मिथुनः इस माह में मानसिक चञ्चलता बन सकती है। निर्णय लेने में असमञ्जस की स्थिति बनेगी। कार्यों में विलम्ब सम्भव है, परन्तु धैर्य रखने से सफलता अवश्य मिलेगी। मित्रों का सहयोग लाभकारी रहेगा। यात्रा के योग बन सकते हैं।

कर्कः आपके कैरियर में उन्नति के संकेत प्राप्त होंगे। उच्च अधिकारियों से सहयोग मिलेगा। घर-परिवार में शुभ समाचार मिल सकता है। भूमि-भवन सम्बन्धी मामलों में लाभ के योग हैं। स्वास्थ्य अच्छा रहेगा, मानसिक प्रसन्नता बनी रहेगी।

सिंहः इस माह मान-सम्मान और प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। शिक्षा, प्रतियोगिता एवं सरकारी कार्यों में सफलता मिलने की सम्भावना है। आत्मविश्वास बढ़ेगा। क्रोध और अहंकार से बचें, अन्यथा सम्बन्धों में तनाव आ सकता है।

कन्याः इस माह में कार्यभार बढ़ेगा। परिश्रम अधिक करना पड़ेगा, लेकिन परिणाम धीरे-धीरे अनुकूल होंगे। स्वास्थ्य में पेट एवं कमर से सम्बन्धित समस्या हो सकती है। आर्थिक मामलों में सावधानी रखें और अनावश्यक खर्च से बचाव करेंगे।

तुलाः आपके दाम्पत्य जीवन के लिए यह शुभ रहेगा। साझेदारी के कार्यों में लाभ होगा। सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी। कला, मीडिया एवं रचनात्मक क्षेत्रों से जुड़े लोगों को विशेष सफलता मिलेगी।

वृश्चिकः आपको गुप्त शत्रुओं और विरोधियों से सावधान रहने की आवश्यकता है। कार्यस्थल पर मानसिक तनाव बन सकता है। किसी पुराने विवाद का समाधान हो सकता है। स्वास्थ्य के प्रति सतर्क रहेंगे। विशेषकर रक्तचाप एवं नींद से सम्बन्धित विषयों में अवरोध

*ज्योतिष विभागाध्यक्ष, श्री गोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ गोरखपुर

उत्पन्न होगा।

धनुः आपके भाग्य का पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा। धार्मिक एवं आध्यात्मिक कार्यों में रुचि बढ़ेगी। शिक्षा, लेखन और विदेश से जुड़े मामलों में लाभ मिलेगा। सन्तान पक्ष से सुखद समाचार प्राप्त हो सकता है।

मकरः आपके आर्थिक मामलों में उतार-चढ़ाव की स्थिति बन सकती है। परिवार की जिम्मेदारियाँ बढ़ेंगी। कार्यक्षेत्र में धैर्य और संयम से काम लेने पर स्थिति आपके पक्ष में होगी। स्वास्थ्य में जोड़ों के दर्द की शिकायत हो सकती है।

कुंभः इस माह में नवीन योजनाओं की शुरुआत होगी। मित्रों और सहयोगियों से लाभ मिलेगा। तकनीकी, सामाजिक एवं नवाचार से जुड़े क्षेत्रों में प्रगति होगी। आय में वृद्धि के संकेत हैं। पारिवारिक स्थिति अधिक मजबूत करने की जरुरत है।

मीनः यह माह मानसिक शान्ति और रचनात्मकता को बढ़ाने वाला रहेगा। आध्यात्मिक कार्यों में सफलता मिलेगी। सेवा एवं दान-पुण्य से मन को सन्तोष मिलेगा। आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी। स्वास्थ्य अच्छा रहेगा किन्तु भावनात्मक संतुलन बनाए रखने की जरूरत है।

■

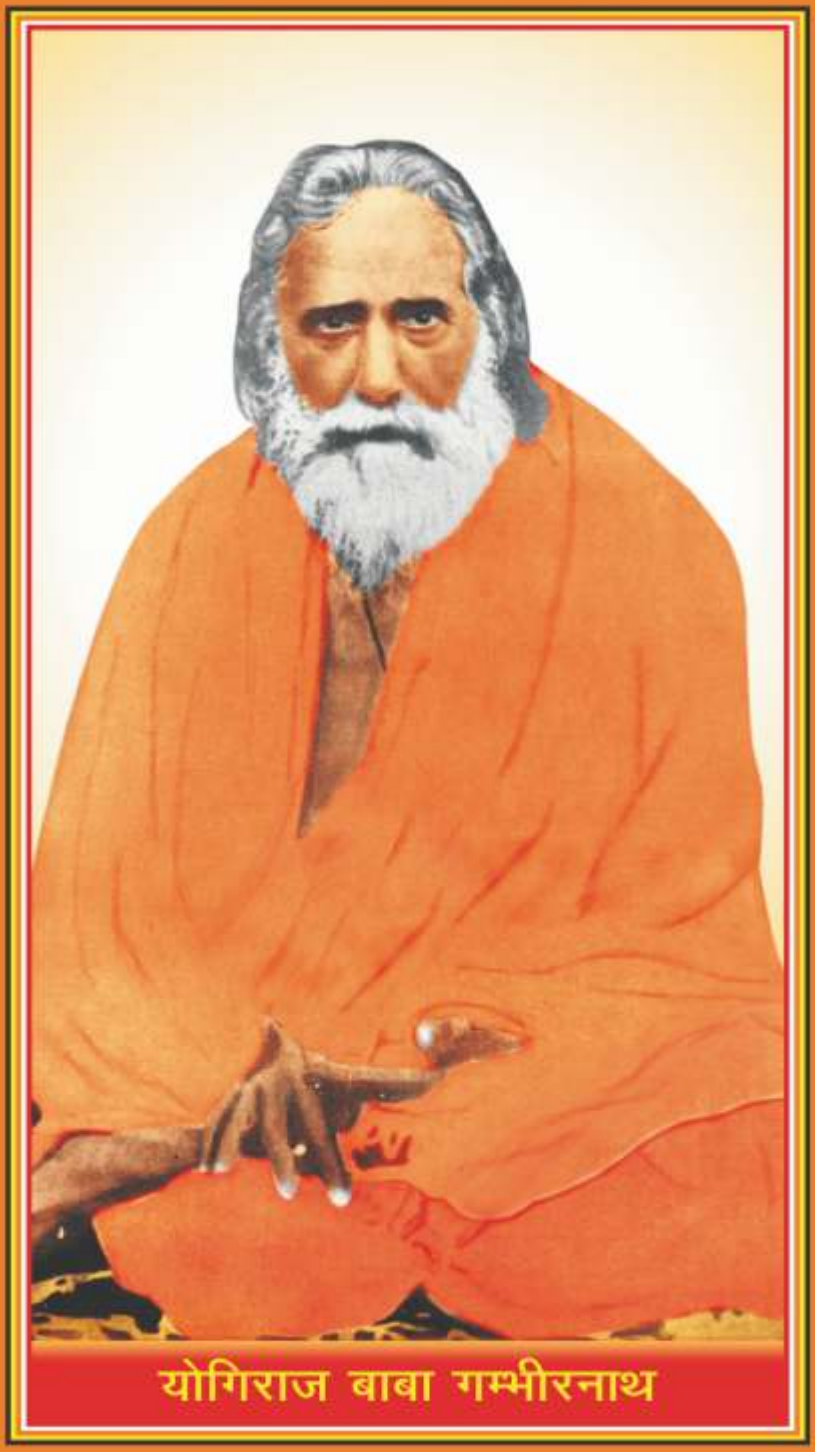

योगिराज बाबा गम्भीरनाथ

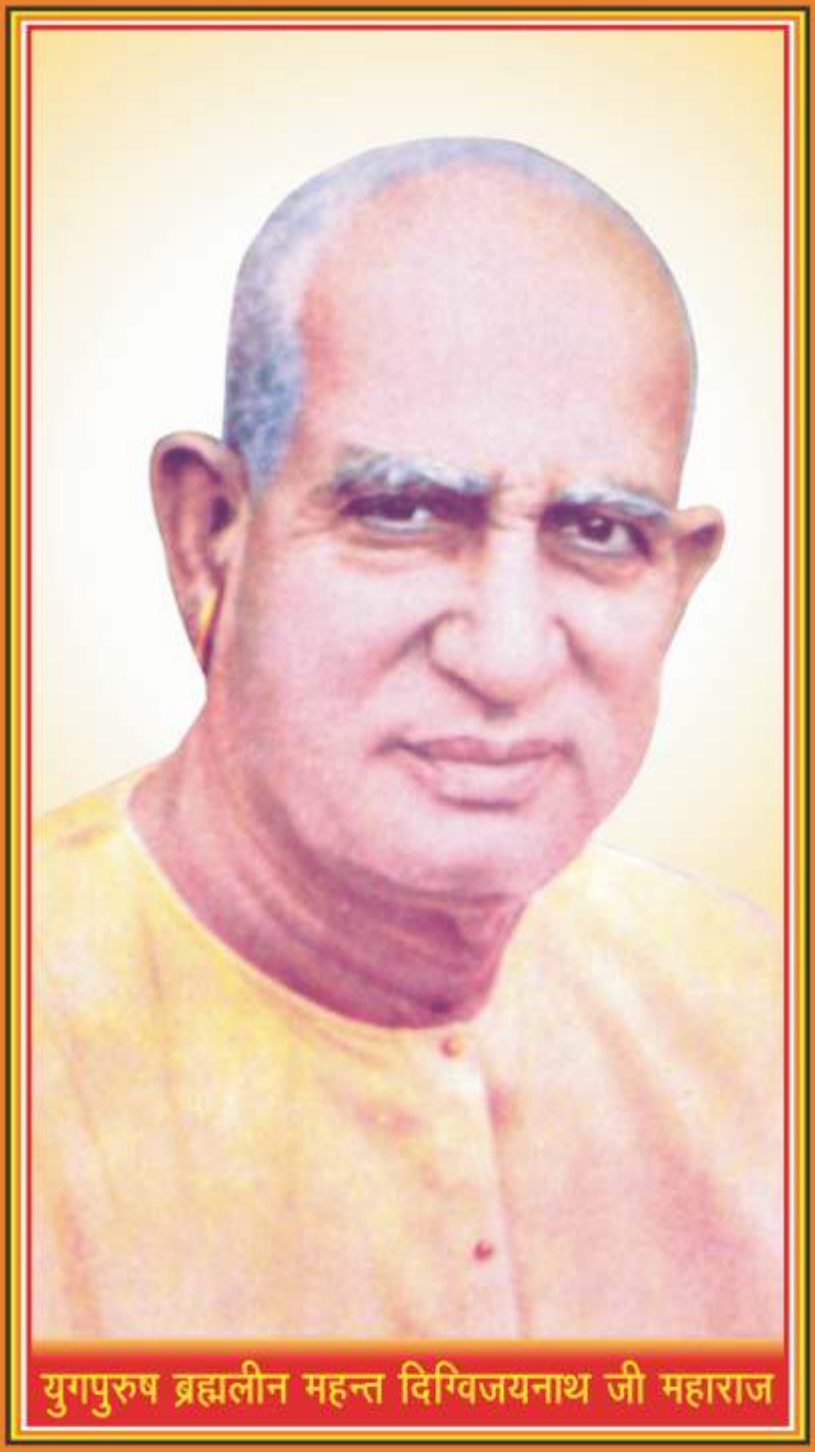

युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज

भारतीय ज्ञान परंपरा में नाथपंथ

*प्रो. हरिप्रसाद अधिकारी

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम और सर्वाधिक समृद्ध बौद्धिक परंपराओं में से एक है। यह केवल तर्क और शास्त्र तक सीमित नहीं रही, बल्कि अनुभव, साधना और आत्मबोध पर आधारित एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करने वाली परंपरा है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें भौतिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक सभी स्तरों पर ज्ञान का विकास हुआ है।

वेदों से प्रारंभ - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद इन चार वेदों में ब्रह्मांड, जीवन, धर्म और प्रकृति के रहस्यों की खोज की गई है।

दर्शन परंपरा - षड्दर्शन - सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त भारतीय तात्त्विक चिंतन के मूल में हैं।

गुरु-शिष्य परंपरा - प्रारंभिक काल में ज्ञान का सम्प्रेषण मौखिक परंपरा के माध्यम से किया गया, जिसमें अनुभव, अनुशीलन और अभ्यास को सर्वोपरि माना गया।

लोक और तांत्रिक परंपराएँ: मुख्यधारा के शास्त्रों के साथ-साथ भारत में अनेक लोक-आध्यात्मिक धाराएँ भी विकसित हुईं, जिनमें तांत्रिक, सिद्ध और नाथ परंपराएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

नाथपरंपरा

नाथ परम्परा भारत की मध्ययुगीन योगतंत्र परम्पराओं का एक प्रमुख अंग है। यह शैव शिवभक्ति एवं योग-तंत्र पर आधारित पन्थ माना जाता है। परंपरा के अनुसार आदिगुरु आदिनाथ अर्थात् शिव स्वयं इस पंथ के प्रथम गुरु हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से यह परम्परा ८वीं १०वीं शताब्दी के दौरान विकसित हुई। मध्ययुगीन सांस्कृतिक परिवेश में बौद्ध, शैव, तांत्रिक एवं योग परम्पराओं का संगम हुआ, जिससे नाथ परम्परा ने आकार लिया। अभिलेखों में भी देखा गया है कि मत्स्येन्द्रनाथ का उल्लेख अभिनवगुप्त द्वारा रचित १०वीं शताब्दी के ग्रंथ तंत्रालोक में सिद्ध के रूप में मिलता है। इस आधार पर स्पष्ट है कि नाथ की जड़ें कम से कम १०वीं शताब्दी तक में हैं। हालांकि मत्स्येन्द्रनाथ के पूर्व की कथात्मक परम्पराएँ ८वीं ९वीं शताब्दी से जुड़ी मानी जाती हैं।

प्रमुख गुरुः मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ का योगदान -

नाथ पन्थ के संस्थापक प्रमुख गुरु मत्स्येन्द्रनाथ और उनके शिष्य गोरखनाथ हैं।

पूर्व अध्यक्ष तुलनात्मक धर्म दर्शन विभाग, सं.सं. वि. वि. वाराणसी

मत्स्येन्द्रनाथ को अक्सर हठयोग के पुनरुत्थानकर्ता एवं तांत्रिक साधनाओं का विशेषज्ञ माना जाता है। उनके शिष्य महायोगी गोरखनाथ (१०वीं ११वीं सदी) ने नाथ संप्रदाय को व्यवस्थित रूप दिया और मठ व्यवस्था स्थापित की। गोरखनाथ ने हठयोग से संबंधित अनेक ग्रंथों की रचना की और निर्गुण भक्ति की विचारधारा का प्रवर्तन किया। **इतिहास में गोरखनाथ को नाथ पन्थ का संस्थापक भी माना जाता है।** इनके योगदान से नाथ परम्परा को एक संगठित स्वरूप मिला और योगतंत्र की प्राचीन गूढ़ परम्परा जन-जन तक फैली।

दार्शनिक दृष्टिकोण - योग, तंत्र एवं आत्मदर्शन -

नाथ पन्थ का दर्शन योगोन्मुख है। यह हठयोग एवं कुंडलिनी योग सहित योग के गूढ़ तंत्रों को आत्मदर्शन (ब्रह्म-साक्षात्कार) का मार्ग मानता है। साधकों का लक्ष्य शरीर-चेतना को साधकर सहज सिद्धि की अवस्था प्राप्त करना होता है। गुरु-शिष्य योगदर्शन के माध्यम से आत्मा का ज्ञान कराते हैं और इन्द्रियों तथा मानसिक बन्धनों का परित्याग कराते हैं। नाथ ग्रंथों में तांत्रिक मन्त्रचिन्तन, आसन, प्राणायाम और ध्यान तकनीकों का समावेश है, जिससे साधक को आत्मा के स्वरूप का साक्षात्कार होता है । इसके अतिरिक्त नाथ परम्परा अपनी रहस्यवादी एवं प्रतिरोधी अभ्यासों के लिए भी जानी जाती है; यह प्रथा सामाजिक रूढ़ियों की आलोचना करते हुए वर्जित कार्यों के माध्यम से भी पीढ़ियों तक आत्मबोध की शिक्षा पहुँचाती रही है।

गुरु-शिष्य परंपरा का महत्व -

नाथ पन्थ में गुरु-शिष्य परम्परा को सर्वोच्च माना गया है। गुरु ही योग-साधक को सूक्ष्म ज्ञान प्रदान करता है और उसकी साधना मार्गदर्शन की रीढ़ है। 'गुरु शिष्य संबंध' नाथपरम्परा की पहचान रही है, जिसमें गुरु अपने गुरुग्रंथों एवं मौखिक परम्परा द्वारा शिष्य को हठयोग, तंत्र एवं ध्यान की शिक्षाएँ देते हैं। इस अनुशासन का अभ्यास साधक को आध्यात्मिक अनुशासन और आत्म-दर्शन की ओर अग्रसर करता है। इसलिए परम्परा में एक दक्ष गुरु को अति आवश्यक माना जाता है।

सामाजिक संरचना और जातिगत समरसता में योगदान -

नाथ परम्परा ने सदैव ही सामाजिक समरसता को प्रोत्साहित किया है। गुरु गोरखनाथ ने पारम्परिक वर्ण व्यवस्था को अस्वीकार कर सामाजिक समता का संदेश दिया। नाथ संप्रदाय ने अनुयायियों को किसी भी जाति या धर्म से द्वेषरहित रूप से स्वीकारा। इस दृष्टि से नाथ योगी परम्परायें जातिगत बंधनों से ऊपर उठी हुई रही हैं। इनके विचारों में समानता, सहजता एवं स्वतंत्र चिंतन को प्रोत्साहन मिलता है, और ये जातिगत विषमताओं एवं सामाजिक अन्याय के खिलाफ खड़ी होती हैं। यथार्थ में,

नाथ पंथ ने भारतीय समाज में विभिन्न वर्गों को एक सूत्र में बाँधने का कार्य किया है। इसका आशय यह है कि नाथ साधु-संत व गृहस्थ दोनों में मिलते रहे, फिर भी कोई जातिगत भेदभाव परिधान नहीं बन पाया। इस प्रकार सामाजिक एकता एवं समरसता में नाथ परम्परा का योगदान उल्लेखनीय रहा है।

साहित्य, संस्कृति और भारतीय ज्ञान परंपरा में स्थान -

नाथ पंथ का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक योगदान विशाल है। भारतीय समाज, संस्कृति और लोकजीवन में नाथ संप्रदाय के प्रभाव की गुंजाइश दिखाई देती है। गोरखनाथ सहित अनेक नाथ योगियों ने पद, दोहा, वचन आदि काव्य-रचनाएँ कीं, जिनमें योग और तंत्रज्ञान के रहस्यों के साथ समाज और जीवन के व्यावहारिक दृष्टिकोण का चित्रण भी है। इन रचनाओं में आध्यात्मिक ज्ञान के साथ-साथ सामाजिक अन्याय और समाज में व्याप्त आडंबरों के खिलाफ संदेश भी निहित है। नाथ परम्परा का अपना शैव-संबंधित शास्त्रीय साहित्य भी विकसित हुआ, जिसका अधिकांश भाग ११वीं शताब्दी के बाद का है। उदाहरणतः तेलुगुभाषा में १५वीं शताब्दी का ग्रंथ नवनाथ चरित्र नाथ पंथ के नवगुरुओं का वर्णन करता है। इसके अलावा बंगाली, मराठी, हिंदी इत्यादि भाषाओं में भी नाथ साहित्य की पंक्तियाँ मिलती हैं। इस प्रकार नाथ परम्परा ने भारतीय ज्ञान परम्परा में योगतंत्र साहित्य की एक समृद्ध शाखा का निर्माण किया है।

आधुनिक युग में नाथपंथ की प्रासंगिकता और योगदान -

आज भी नाथ पंथ न केवल जीवित है, बल्कि आधुनिक समाज में इसके मूल्य और शिक्षाएँ प्रासंगिक बनी हुई हैं। उत्तर प्रदेश के गोरखनाथ मठ (गोरखपुर) को नाथ परम्परा का प्रमुख केंद्र माना जाता है, जिसके वर्तमान महंत माननीय मुख्यमंत्री उत्तरप्रदेश, योगी आदित्यनाथ जी हैं। नाथ योगी समूचा योग तथा ध्यान-मार्ग जन-जन तक पहुँचाने में अग्रणी रहे हैं। परम्परा ने विभिन्न योग विद्यालयों के विकास को प्रभावित किया है और इसके उपदेश आधुनिक योगाभ्यास एवं ध्यान तकनीकों में परिलक्षित होते हैं।

समाज के ऐतिहासिक संदर्भ में देखें तो नाथ पंथ ने सामूहिक कल्याण के लिए योग तथा अध्यात्म का मार्ग प्रशस्त किया है। यह परम्परा आत्मसंयम, ध्यान और योग द्वारा व्यक्तिगत सशक्तिकरण का संदेश देती है, जिससे साधक न केवल स्वयं में परिवर्तन ला सकता है बल्कि समाज में सकारात्मक परिवर्तन का बीज भी बोता है। भारतीय ज्ञान परंपराओं की मौलिकता को देखने के आधुनिक दृष्टिकोण के तहत नाथ पंथ ने यह सिखाया है कि धर्म एवं योग सिर्फ अतीत की विरासत नहीं, बल्कि

आज और भविष्य के लिए भी प्रासंगिक संजीवनी हैं। नाथ परम्परा ने इसलिए आधुनिक भारतीय संदर्भ में भी अपनी उपयोगिता बनाए रखी है क्योंकि यह विविधता, समावेशिता और आध्यात्मिक शक्तिरूप में भारतीय समाज की सम्पूर्णता का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार नाथ पंथ योग-तंत्र की प्राचीन परम्पराओं का संरक्षक होने के साथ-साथ सामाजिक सुधार और समग्र मानव कल्याण में अपने योगदान के कारण आधुनिक जगत में भी महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। अन्ते च-

श्रीगोरखो धर्मपथानुयायी
सन्देशयन् मानवमुक्तिमार्गम्।
समागतो भारतपुण्यभूमौ
सन्नाथपन्थं विमलं जगाद॥१॥

अद्वैतं परमं ब्रह्म शिवं शान्तं जगद्गुरुम्।
ध्यानेन तोषयामास सर्वलोकहितावहम्॥२॥

नाथपन्थो जगद्वन्द्यो भेदभावविनाशकः।
सर्वमानवसेवार्थं तत्परोऽद्यापि राजते॥३॥

समाना मानवाः सर्वे भेदवादो निरर्थकः।
अतः सर्वैः शिवः सेव्यो भेदबुद्धिं विहाय वै॥४॥

भारते चाथ नेपाले भूटाने च विशेषतः।
नाथपन्थजनाः प्रायो दृश्यन्ते भेदवर्जिताः॥५॥

अतः सर्वैर्जनैर्नूनं नाथपन्थस्य मान्यताः।
विज्ञाय निष्ठया नित्यं पालनीयाः प्रयत्नतः॥६॥

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभामतिः।
भवन्ति नाथपन्थस्य पालकानां कदाचन॥७॥
॥जय गुरु गोरखनाथ॥

योग क्या है?

*सुभाष विद्यालंकार

चित्तवृत्ति का निरोध करना ही योग है। यह योग-साधना ही मनुष्य जीवन का एकमात्र उद्देश्य है। योग साधना के लिये ही हमको मनुष्य जीवन मिला है। पशुवृत्ति पर चलने के लिये मनुष्य जीवन नहीं है। मनुष्य जीवन बड़ी कठिनाई से मिल पाता है। अनेक पुण्य कर्मों और भगवान् की कृपा से हमको मनुष्य जीवन मिला है। इसलिये मानव देह से मानवोचित कार्य करना ही आवश्यक है। पशुवृत्ति पर चलने से पशुवृत्ति की तृप्ति नहीं होती है। अपितु पशुवृत्ति लगातार बढ़ती ही जाती है। जिससे अधिक से अधिक कष्ट मिलता है।

चित्तवृत्ति क्या है? चित्त के स्रोत का नाम ही चित्तवृत्ति है। कामना और इच्छा ही चित्तवृत्ति है। जिसका चित्त जितना चंचल है उसको उतना ही कष्ट मिलता है। जिसके चित्त में कामना नहीं है वह ही सुखी है। विषय वासना ही दुखों का मूल कारण है। जिसमें जितना वैराग्य है वह उतना ही सुखी है। विषयों में आसक्तिहीन होना ही वैराग्य है। विषयासक्ति से ही संस्कार बनते हैं। संस्कार ही दुख के मूल हैं। हम लोग अनादि काल से संस्कारों का संग्रह कर रहे हैं। इन संस्कारों के अनुसार हमने अनादिकाल से लाखों प्रकार की देहों को धारण किया है और कर रहे हैं। संस्कारों को दूर करने के लिये ही साधना की आवश्यकता है। और इस साधना का नाम योग साधना है। योग साधना के द्वारा चित्तवृत्ति का निरोध करना ही मूल साधना है।

विषयासक्ति ही पाप है। विषयासक्ति ही हमको पाप की ओर धकेलती है। विषयासक्ति के कारण शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध आदि विषय हमारे चित्त में छाप छोड़ देते हैं और यह छाप अनन्त काल तक रह जाती है। यह छाप ही संस्कार है। अनन्तकाल से यह छाप संचित हो रही है। इसी का नाम कर्माशय, हृदय-ग्रन्थि या अविद्या का बन्धन है। इस कर्माशय से ही वासना उठती है। उस वासना के अधीन होकर ही हमारी इन्द्रियां चेष्टा करती हैं। इस वासना का प्रतिरोध करना साधना का विशेष अंग है। संस्कार नष्ट होने से ही चित्त-शुद्धि होती है और चित्त शुद्धि होने से ही चित्त-वृत्ति का निरोध होता है। इसी का नाम योग है।

योग सिद्ध न होने से मानव जीवन व्यर्थ हो जाता है। वैराग्य से ही योग-विद्या का

---

*व्याख्याकार हठयोगत्रयी, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली।

लाभ नहीं होता है, इसके साथ अभ्यास भी चाहिये। अभ्यास ओर वैराग्य के द्वारा ही योग अर्थात् चित्तवृत्ति का निरोध होता है। अभ्यास के बिना कोई काम सफल नहीं होता। किसी काम में जितना अधिक अभ्यास किया जायगा उस कार्य की सिद्धि उतनी ही जल्दी होगी। निष्ठा और श्रद्धा के साथ कार्य की सफलता के लिये बार-बार प्रयत्न करना ही अभ्यास है। अभ्यास से कोई कार्य पूरा न हुआ हो ऐसा कोई काम नहीं है।

योगाभ्यास ही श्रेष्ठ अभ्यास है। योग साधना के बिना परम आनन्द की प्राप्ति का और कोई उपाय नहीं। धैर्य के साथ अभ्यास करना चाहिये। बहुत से साधक कुछ समय तक साधना और अभ्यास करने के बाद धैर्य खो देते हैं और योग साधना छोड़ देते हैं। योग साधना चाहे जितनी भी कठिन क्यों न हो, इसको कभी नहीं छोड़ना चाहिये। बालक, युवक और वृद्ध सभी को अष्टांग-योग साधना करनी ही पड़ेगी। सुख और शान्ति पाने का और कोई उपाय नहीं है। जिस वृद्ध व्यक्ति ने सारी आयु नष्ट की है उसे भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। आयु अगर एक दिन के लिये भी बाकी रहे तो भी योग साधना से विमुख नहीं होना चाहिये। एक दिन के लिये योग साधना करने के बाद भी यदि मृत्यु हो जाय तो वह भी श्रेयस्कर है क्योंकि तुम उत्कृष्ट योगी के वंश में जन्म लोगे। मृत्यु काल में भी यदि योग साधना की प्रबल आकांक्षा रहे तो दूसरे जन्म में तुम निश्चित रूप से उत्तम और अनुकूल शरीर प्राप्त करोगे। प्रभु तुम्हें ऐसा अवसर दे देंगे कि तुम सत्संग में रहकर योग साधना में सिद्धि लाभ करोगे।

हताश या निराश नहीं होना चाहिये। भगवान् के ऊपर सब छोड़कर योग साधना के व्रती हो जाओ। वृद्ध के लिये एक ही बात है। इतने दिन आयु को वृथा नष्ट कर दिया। जीवन की आधी आयु सोते रहकर खो दी। शेष आधी आयु बचपन के खेल-कूद में और यौवन को सब सम्बन्धियों की दासता में खो दिया। अब वृद्धावस्था में रोग, शोक और बुढ़ापे से आक्रान्त होकर, शरीर और मन का बल खो कर दुश्चिन्ता में चारों ओर निराशा का अन्धकार देख रहे हो। लेकिन डरो मत, मन में साहस रखो। भगवान् की शरण में आ जाओ। पाप के सभी काम पूरी तरह छोड़ दो। इस मुहूर्त से ही योगाभ्यास में लग जाओ। तुम्हारा कल्याण होगा।

किन्तु केवल योगाभ्यास से ही काम नहीं चलेगा। इसके साथ ही साथ वैराग्य भी चाहिये। भोग-विषयों के प्रति वैराग्य नहीं होने से मुक्ति, मोक्ष, कैवल्य या परमानन्द नहीं मिलता। वैराग्य के बिना केवल योगाभ्यास से योग की सिद्धि नहीं होती है। यदि इन्द्रियों को भोग-ऐश्वर्यों से हटा नहीं सकोगे, विषय-लालसा से यदि इन्द्रियों को

वश में नहीं कर सकोगे तो योग साधना कठिन हो जायेगी। इन्द्रियों को संयत रखो, पशु-वृत्तियों को छोड़ दो, योग में सिद्धि लाभ करोगे।

यम-नियम की साधना के द्वारा योग विद्या का बीज रोपा जाता है। आसन और प्राणायाम के द्वारा यह बीज अंकुरित होता है। प्रत्याहार के द्वारा यह पुष्पित होता है और धारणा, ध्यान, समाधि द्वारा वह फलवान् होता है। योग विद्या के इस वृक्ष की आवेष्टनी (बाड़) के रूप में हठयोग के द्वारा साधकों को शारीरिक और मानसिक क्लेशों से बचाया जाता है।

उपर्युक्त उपदेश महान् समाज सुधारक और आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती को उनके योगविद्या के गुरु श्रीमान् स्वामी ज्वालानन्द पुरी और स्वामी शिवानन्द गिरि ने योग शिक्षा के प्रारम्भ में दिया था। योग मार्ग के साधकों के लिये यह उपदेश अत्यन्त मूल्यवान् और सार्थक है।

सपेरे अथवा कालबेलिए: नाथपंथ के संदर्भ में

*ब्रजेन्द्र कुमार सिंहल

अन्तर्राष्ट्रीय-रामस्नेही-सम्प्रदाय प्रवर्तक जगद्गुरु स्वामी श्रीरामचरणजी ने अपनी अनुभववाणी में गुरु-मुखी और मन-मुखी का वर्णन करते हुए कहा है-

गुरु-द्रोही सूँ प्रीति करि मिलिए कबहू नाहिं।
मिल्याँ सिकलता ना रहै सिद्धि असिधि होइ जाहिं॥
सिद्धि असिधि होइ जाहिं कहा जोगी वैरागी।
कन्हीपाव कूँ देखि प्रत्यवाइ कैसी लागी॥
साँप खिलावत फिरत हैं भेख धारि जग माहिं।
गुरु-द्रोही सूँ प्रीति करि मिलिए कबहू नाहिं ॥

- स्वामीजी श्रीरामचरणजी महाराज की अनुभववाणी, ग्रंथ अनुभव-विलास, प्रकरण १, छंद ४८, सम्पादक : ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल

गुरु-द्रोही से प्रीति करके कभी भी उससे मिलो मत। उसका संग करना तो और भी खतरनाक है। ऐसे गुरु-द्रोही से मिलने से शांति नष्ट होकर विकलता-अशांति की ही प्राप्ति होती है। सिद्धि, असिद्धि में रूपान्तरित हो जाती है; संग करने वाला या मेल-मिलाप करने वाला चाहे गृहस्थाश्रमी हो या विरक्ताश्रमी हो। उदाहरण कान्हीपाव का सामने है जिसको कितना बड़ा शाप मिला, जिसके कारण आज भी उसके शिष्य-परम्परा के लोग वेश धारण करके उदर-पूर्ति हेतु सर्पों का खेल दिखाते फिरते हैं।

इस छंद से हमको जो तथ्य ज्ञात होते हैं उनको संक्षिप्त में निम्न प्रकार सूत्रबद्ध कर सकते हैं-

(१) कभी भी गुरु-द्रोही व परम्परा-द्रोही नहीं बनना चाहिए।

(२) गुरु-द्रोही से मेल-मिलाप नहीं करना चाहिए।

(३) मेल-मिलाप करने से बड़ा भारी संकट उठाना पड़ता है। चाहे मेल-मिलाप करने वाला कितना ही बड़ा योगी, यती, सिद्ध-साधक ही क्यों न हो।

(४) कान्हीपाव, जो जालन्धरनाथ के शिष्य थे उन्होंने गुरु से कपट किया, जिसके कारण उन्हें गुरु का शाप झेलना पड़ा। उनकी शिष्य-परम्परा नहीं चली। उनके समस्त १४०० चेले अप्रकट हो गये और उदरपूर्ति हेतु सर्पों को पालकर उनका खेल दिखाने लगे। अब भी सर्पों का खेल दिखाकर पेट भरते हैं, 'पाव पंथी' कहलाते हैं

*साहित्यकार, नई दिल्ली

तथा माथे पर गेरुआ रंग की पगड़ी बांधते हैं। 'कान्हीपाव' के नाम में प्रयुक्त 'पाव' जो 'पाद' का विकृत रूप है इसके कारण 'पाव पंथी' कहलाते हैं।

प्रश्न उठता है, आखिर वह कौनसी घटना है जिसके कारण कान्हीपाव को गुरु-द्रोही होना पड़ा व शाप के कारण कष्ट उठाने पड़े। इस संबंध में राजस्थान में प्रचलित 'गोपीचन्द्र-वैराग्य-बोध महागाथा', 'गोरख-जनम-लीला' एवं-बाङ्ला-लोकगाथा 'गोपीचन्द्र-गान', 'गोरख विजय' आदि, जो कई लोक गायकों ने अलग-अलग रूपों में लिखी व गायी हैं, के आधार पर यत्किंचित् लिखा जाता है।

कान्हीपाव, जिनके कई नाम मिलते हैं- कृष्णपाद, कानूपा, कण्हपा, कन्हीपाव, कान्हीपाव, कण्ह आदि-आदि महान् कापालिक बौद्ध सिद्ध एवं कापालिक नाथ-सिद्ध थे। बाद में ये जालंधरनाथ के शिष्य हो गये। ये संस्कृतज्ञ व सर्वाधिक ग्रंथ रचयिता माने जाते हैं। इनके दोहा कोश भी मिले हैं जिनका सुन्दर व श्रेष्ठ सम्पादन प्रबोधचन्द्र बागची ने करके प्रकाशित करवाए हैं। म०म० हरप्रसाद शास्त्री ने 'बौद्ध गान ओ दोहा' में इनके १२ गान प्रकाशित किये हैं। ये रंग के काले और उड़ीसा देश निवासी कहे गये हैं। बाङ्ला विद्वान् इनको बंगाली मानने के पक्ष में ज्यादा उत्साहशील दिखते रहे हैं। इनका समय पाल वंश के देवपाल नामक राजा का राज्यकाल बताया गया है जिसका समय सन् ८०९ से ८४९ ई० बताया गया है।

एक बार भ्रमण करते-करते योगिराज गोरखनाथ विजयनगर (बाङ्ला लोकगाथाओं 'गोपीचन्द्र-गान', 'गोपीचन्द्र-पांचाली', 'गोरख विजय', 'मीनचेतन' आदि के अनुसार, जबकि राजस्थानी गाथाए-गोरख-जनम-लीला, गोपीचन्द्र-वैराग्य-बोध, गोपीचन्द्र-वैराग्य-गान आदि में विद्यानगर अथवा बीदर) गये। एक बकुल के वृक्ष के नीचे बैठ गये। शिष्य को भिक्षा लेने को शहर में भेजा। शहर के द्वारों के ऊपर ऐसे घंटे लटक रहे थे जिनको बिना ऊपर चढ़े नीचे से ही जो साधु-संन्यासी बजा दे, वह शहर में भिक्षार्थ प्रवेश प्राप्त कर सकता था, अन्यथा नहीं। गोरखनाथ के साथ वाले शिष्य में वह क्षमता नहीं थी कि वह उनको बजा सके। उसने आकर गुरु गोरखनाथ को कहा, तब स्वयं गोरखनाथ भिक्षार्थ शहर की ओर गए।

जैसे ही गोरखनाथ द्वार पर पहुँचे, घण्टा नीचे आ गया और अपने आप बज उठा। जैसे ही घण्टा बजा, शहर में रहने वाले कान्हीपाव को मालूम हो गया कि आज कोई संन्यासी शहर में आया है। उन्होंने सोचा, घण्टे को बजाने की क्षमता केवल और केवल गोरखनाथ में है। वही बजाने में समर्थ हैं। अतः हो न हो, आने वाला संन्यासी गोरखनाथ ही हो।

कान्हीपाव विजयनगर (या विद्यानगर या बीदर। मेरा मत 'बीदर' जिसको पहले

'विद्यानगर' कहा जाता रहा होगा, के पक्ष में है) के राजा के गुरु थे। वे स्वयं सिंहासन पर बैठते, राजा सामने खड़ा होकर चॅवर करता। उनके १४०० चेले थे जिनमें से ७०० प्रकट व ७०० गुप्त रहते थे। घण्टे की ध्वनि सुनकर कान्हीपाव द्वार पर आये। दोनों योगिराजों का मिलन हुआ। कुशलक्षेमोपरान्त कान्हीपाव ने उलाहना दिया कि गोरख ! यदि तुम इतने ही सिद्ध हो तो जाओ और स्त्रियों में आसक्त कामोपभोग करते हुए अपने गुरु का उद्धार करो। तुम तो रंडी के दास, मछिन्द्रनाथ के शिष्य हो। जाओ, उनका उद्धार करो। गोरखनाथ ने इस व्यंग्य को गंभीरता से लिया और कान्हीपाव पर व्यंग्य करते हुए कहा, तेरा गुरु जालंधरनाथ 'मेहेरकुल' में वहाँ के राजा द्वारा गड्ढे में बन्द करवा रखा है। जाओ और अपने गुरु का उद्धार करो। दोनों अपने-अपने गुरुओं के उद्धार हेतु प्रस्थान कर गये।

दूसरी लोकगाथा के अनुसार गोरखनाथ वृक्ष के नीचे ध्यानस्थ थे, इतने ही में उन्होंने देखा कि कोई योगी आकाश-मार्ग से उड़कर कहीं जा रहा है। गुरु गोरखनाथ ने मन में सोचा, ऐसा कौन-सा योगी है जो मेरी अवहेलना करके मेरे ऊपर होकर आकाश-मार्ग से जा रहा है। तत्काल उन्होंने अपनी लकड़ी की खड़ाऊँ फेंकी। वह खड़ाऊँ जाकर आकाश मार्ग से योगी को नीचे उतार लाई। नीचे उतरने वाले योगिराज कान्हीपाव थे। दोनों परस्पर मिले और कुशलक्षेमोपरान्त उक्त व्यंग्य-पूर्ण वार्तालाप दोनों के मध्य हुआ।

परिणामत: गोरखनाथ कदलीदेश (आसाम, स्त्री राज्य) में गुरु मछिन्द्रनाथ का उद्धार करने को गये तथा कान्हीपाव गौड़ (बंगाल) देश के मेहेरकुल (राजस्थानी-गाथाओं में धौलागढ़ कहा गया है। बंगाल के नगर मेहेरकुल को ही देवपर्वत कहते हैं जो गोपीचन्द्र की राजधानी का स्थान है। राजस्थानीय गायकों ने देवपर्वत को ही धौलागढ़ कहा है) में गये जहाँ जालन्धरनाथ को गड्ढे में बन्द कर रखा था।

कान्हीपाव मेहेरकुल तथा पूरे गौड़ (बंगाल) में एक सिद्ध के रूप में पहले से ही प्रसिद्ध थे। अत: जैसे ही वे वहाँ पहुँचे, वहाँ के राजा गोपीचन्द्र उनके स्वागत के लिये आए। खूब मेहमान नवाजी की किन्तु कान्हीपाव ने गोपीचन्द्र का अभिवादन तक स्वीकार नहीं किया। काफी अनुनय-विनयोपरान्त कान्हीपाव ने कहा, तुमने मेरे गुरु जालन्धरनाथ को गड्ढे किंवा कुवें में दबा रखा है। ऊपर घोड़ों का मूत्र और उनकी लीद डालते हो। ऐसा अनर्थ क्यों किया?

गोपीचन्द्र ने कहा, मुझे नहीं पता था कि जालंधरनाथ आपके गुरु हैं। उन्हें कुवें में दबाए हुए वर्षों हो गए। पता नहीं, जीवित हैं; अथवा नहीं? मैं उनको निकलवाने का प्रयत्न करता हूँ किन्तु मुझे डर है कि यदि वे जीवित होंगे और बाहर निकलेंगे तो

मुझे, भस्म किए बिना मानेंगे नहीं।

इस पर कान्हीपाव ने कहा, चिन्ता मत कर, तूने सेवा करके मुझे प्रसन्न कर लिया है। अतः अब मैं एक युक्ति द्वारा गुरु-महाराज का क्रोध शांत करके तुझे बचा लूंगा। चिंता मत कर। मेरी आज्ञा मान। जैसा मैं कहता हूँ, वैसा कर।

अंधे को क्या चाहिए, दो आँख। गोपीचन्द्र को अभय ही चाहिए था। कान्हीपाव ने कहा, तू स्वर्ण के सात पुतले तेरे जैसे बनवा ले। एक-एक पुतला हम योगिराज जालंधरनाथ के सामने रखते जायेंगे। वे भस्म होंगे, तू बच जायेगा।

योजनानुसार कुवें से मिट्टी हटाने लगे। दिन में जितनी मिट्टी हटाते, रात्रि में उतनी ही पुनः कुवें में भर जाती। कुवें को खाली करना असम्भव हो गया। माता मयनामती ने गुरु गोरखनाथ का स्मरण किया। गोरखनाथ आये। उनके प्रभाव से कुवां खाली हो गया किन्तु जालंधरनाथ को बाहर नहीं निकाला। कुवें के किनारे पर पुतला रख दिया तथा जालंधरनाथ के प्रति कान्हीपाव ने नमस्कार निवेदित किया। जालंधरनाथ ने पूछा, यह कौन है? तब, कान्हीपाव ने कहा, यह गोपीचन्द्र है। जालंधरनाथ ने सुनते ही अपने तपोतेज से उसको भस्म कर डाला। इस प्रकार कुल छः पुतले भस्म हो गये। जब सातवीं बार पूछा, तब भी गोपीचन्द्र है, बताया; तब जालंधरनाथ ने कान्हीपाव से कहा 'क्या गोपीचन्द्र अमर हो गया है जो बार-बार वही दिखता है।' तब कान्हीपाव ने कहा, आपका आशीर्वाद है तो वह अमर ही हो गया है। इतना कहते ही स्वर्ण का पुतला जल गया तथा वास्तविक गोपीचन्द्र ने प्रणाम किया।

जालंधरनाथ बाहर आये। उन्होंने कान्हीपाव द्वारा किये गये इस धोखे को पहचान लिया। तत्काल कान्हीपाव को शाप दिया ''तूने मेरे से सच को छिपाया, अतः तेरा योग विफल होगा। तेरी वंश-वेल नहीं चलेगी। जिस प्रकार दूध पिलाने पर भी सर्प डसना नहीं छोड़ता, ऐसे ही तूने मेरी शिक्षाएँ पाकर भी मेरे से कपट किया है; अतः तेरे सभी १४०० शिष्य सर्पों का खेल खिलायेंगे, योगभ्रष्ट हो जायेंगे।''

बस, उसी दिन से कान्हीपाव की शिष्य परम्परा सर्पों का खेल दिखाने लगी। योग-भ्रष्ट हो गई। कान्हीपाव की योग-परम्परागत शिष्य परम्परा नष्ट हो गई। सर्वप्रथम डॉ० प्रबोधचन्द्र बागची ने नाम-ध्वनि की साम्यता को लक्ष्य करके 'कणेरीपाव' जिनकी सबदियाँ मिलती हैं को कान्हीपाव मानने की भूल की जिसको डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल ने 'योग प्रवाह' नामक तथा 'कणेरीपाद' नामक लेख में बिना सोचे-समझे उद्धृत की है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी इस मिथ्या मान्यता का उल्लेख किया है किन्तु उन्होंने अपना निर्णय इस संबंध में कुछ नहीं दिया है। कणेरीपाद की हिन्दी रचनाओं में इन्होंने अपने आपको स्पष्टतः मछिन्द्रनाथ

का शिष्य कहा है 'आदिनाथ नाती मछिन्द्रनाथ पूता, सती कणेरी हम बोल्या रेलो' (देखें, 'योगिराज गोरखनाथ' लेखक ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल। प्रकाशनाधीन ग्रंथ)। अतः 'सती कणेरीनाथ' व 'कान्हीपाव' दोनों पृथक् पृथक् सिद्ध हैं। कणेरी ने अपने आपको मछिन्द्रनाथ का शिष्य कहा है तथा कान्हीपाव ने अपने आपको अपनी चर्यागीतियों में से छठी चर्यागीति में जालन्धरनाथ का शिष्य कहा है। इस संबंध में मैंने अनेक ग्रन्थों के संदर्भ देकर उक्त ग्रंथ में विस्तृत विवेचन किया है। यहाँ तो केवल कालबेलियों की उत्पत्ति कान्हीपाव से कैसे हुई, को बताने मात्र के लिये सम्बद्ध कथानक को संक्षेप में लिख दिया है। साथ ही स्वामी रामचरणजी ने जिस गुरु के प्रति कपट करने पर कान्हीपाव का उदाहरण दिया है. उसकी पूरी अन्तर्कथा को स्पष्ट कर दिया है।

चौपाई :

सिद्ध जलंध्री जैसे रहै। जगत अग्यानी भेद न लहै।।
बीदर सहर जहाँ दख्यण देस। कन्हीपाव जहाँ सिद्ध प्रवेस ।।६१।।
ताके सँग चौदा सौ चेला। अर्ध गुप्त अर्ध परगट खेला।।
बीदर सैर सब कियो प्रमोध। राजा परजा सब सूबोध ।।६२।।
जोजन दस नगरी विस्तारा। तामें और न ग्यान विचारा।।
लघु दीरघ सब सिष करि राख्या। कनीपाव गुरु जन-जन भाख्या।।६३।।
सिध सिंघासण बैठे आई। राजा खड़ौ रहै इक पाँई।।
सगला होइ रह्या आधीना। बीदर सहर सब ही बसि कीना ।।६४।।
फेरी सगलै नगर दुहाई। और अतीत न आवै भाई।।
चहुँ दरवाजा गाढ़ कराया। चाकर हुकम ताहि समझाया।।६५।।
कन्हीपाव सिध परचा करै। टांक्या नाद ज कोट काँगरै ।।
जो यो नाद वैण बजवावै। सोहि अतीत नगर में आवै।।६६।।
चहुँ दरवाजा बांध्या नाद। कान्ही षटदर्शन सूं वाद।।
कितेक दिन यूँ भए बदीत। बैसि रहे चहुँ दिक के अतीत ।।६७।।
कोइ अतीत न पावै भिख्या। बीदर सहर मँडी साधु परिख्या।।
घरि-घरि सिद्ध न सर-सर हंस। तरु-तरु चंदन गिरि-गिर अंस।।६८।।

साखी :

कबीर:

कबीर बन-बन तो चंदन नहीं, सूराँ के दल नाहिं।
सकल समद हीरा नहीं, यूँ साधू जग माहिं । । ६९।।

चौपाई :

कितेक दिन जैसी विधि भया। गोरखनाथ रमत तहाँ गया।।
सुंदर सहर बाग अति बारी। सुफल वृच्छ अंमृत फल भारी।।७०।।
अजब बाग में बैठे आई। भिख्या कूँ सिष दिए पठाई।।
सिष्य सहर दरवाजे गया। ऊठि पौलिया आडा भया।।७१।।
नाद पौलि पै दिया बताई। आगै पग दे घंट बजाई ।।
हाथ न पहुँचौ नाद अजीत। सोच विचार र चल्या अतीत ।।७२।।
जाइ अतीत कह्यो सब भेव। पाखंड एहु रच्यो गुरुदेव ।।
कर ले पत्र चले सिध राव। देखूँ या नगरी को भाव ।।७३।।
हम अतीत हैं पूरण प्रान। काहि न द्योह नगर में जान।।
सोहि अतीत नगर में जावै। बिन कर पहुँच्या नाद बजावै ।।७४।।
कछुक विलंब पचावट कीन्हा। गोरख हुकम नाद कूँ दीन्हा।।
नाद निनाद सप्त सुर लीन्हा। आसण आए नाथ प्रवीना ।।७५।।
बाज्यो चाह्यो नाद अपारा। सारे सहर लग्यो डर भारा।।
गोरखनाथ कैद ता तरुही। धुँधलीमल के ईसर एही ।।७६।।
राजा परजा चले विचारा। कन्हीपाव कूँ ले दीदारा।।
कन्हीपाव कीन्हा आदेस। गोरख तरक वचन परवेस ।।७७।।
घालै पुनी परोजन घात। जैसे गुरु सिष भिस्त न जात।।
जैसे जे तुम हो सिधराया। तो गड्यो गुरू काढ़ौ किन जाया।।७८।।
गुरू हमारे भंग न कोई। गुरू तुमारे क्यूँ नहिं जोई।।
गुरु घरवारी सिष अवधूत। भला बिगूता रंडी का पूत । १७९।।
चमक भई दोउ चित्त न मिलिया। गोरख गुरु दिसि ऊठ र चलिया।।
सिंघलदीप भवइया साथ। बालक रूप किया सिध नाथ।।८०।।
सिंघलदीप भवइया रूप। राग अलापी अधिक अनूप ।।
रहसि रहसि करि गुर समझाए। बाजा मध्य सबद पहुँचाए ।।८।।।
गुरुजी कहौ कहा तुम कीन्हा। सब संचौ र बाघणी लीन्हा।।
गावत गदगद ग्यान की गाथा। मछंदर पिछाण्यो गोरखनाथा ।। ८२।।
गोरख चरणाँ सीस लगाया। बहुत भाँति गुरु कूँ समझाया।।
रस कस बह गया रह गइ छोई। कहै मछन्दर जोग न होई।।८३।।
बागस बह गया रह गया सार। कह गोरख अजहू जोग अपार ।।
मीननाथ सुत मारि जिवाया। यूँ मछिन्द्र पै राज छुड़ाया।।८४।।

गुरु गह काढ्यो गोरखनाथा। खोई वस्तु चढ़ाई हाथा ।।
सिंघलद्वीप पदमणी सुंदर। तहाँ रूप सूँ छल्यो मछंदर ।।८५।।
पड्यो न छल में गोरखनाथा। खोई वस्तु चढ़ाई हाथा।।
गोरख धंन ग्यान का राव। गुरू काढ़ियो करि-करि दाव ।।८६।।
गोरख गुरु कूँ गह करि ल्याया। जहाँ का तहाँ हि आण बिठाया।।
कन्हीपाव धौलागिरि गया। जलंध्रीपाव जहाँ छिप रह्या ।।१८७।।
कन्हीपाव जा दीन्हा डेरा। धौलागिरी चहुँ दिसि घेरा।
मैनावति माता सुधि पाई। वैसि पालकी दरसन आई ।।८८।।
विविध प्रकार भेंट ले धरी। कन्हीपाव कबूल न करी।।
हम तुम माता एह स हेट। गुरु दर्सन करि लेखूँ भेट ।।८९।।
मात अर्ज करि माथ नैवाया। गोपीचंद कूँ पगाँ लगाया।।
कन्हीपाव सिध पूर्या नाद। भू महिं जलंध्री दीन्हा साद ।।९०।।
सिष चवदा सै नाद बजावै। कोइ गुप्त कोइ प्रकट सुनावै।।
आनँद भयो प्रतिग्या पूरी। खोदी भुवि जहाँ रह हजूरी।।९१।।
खोदि धरणि चरणाँ जाइ लागा। बैठे गुरु जहाँ सुंदर जागा।।
फूल सुगंध अरु भँवर गुजारै। फल जल सकल उतम उणिहारै ।।९२।।
करी अरज बाहरि पधरावन। पावैं दरसन सब होइ पावन ।।
रुइ का प्रथम सिंघासन साज्या। किया जतन गुरु आण विराज्या।।९३।।
जैजैकार सकल जग कहै। बारा बरस धरणि ग्रभ रहै।।
जैसे कनक न लागै काई। दिपत देह नहिं काट लगाई ।।९४।।
द्रसण देखि मन भयो अनंदा। सोचौ माता गोपीचन्दा।।
कैसे द्रसण चरण गहि लीजे। कान्हीपाव कहै सो कीजे ।।९५।।

कान्हीपाव उवाच :

कान्हीपाव कहै सुण माता। ए तो मोसूँ टलै न घाता ।।
पै एक विधी मैं तोहि बताऊँ। मेरी बात सुणौ तुम माऊँ ।।९६।।
सप्त-धातु का पुतला सात। सुंदर अधिक विराजत गात।।
बार आठ में राजा आया। कन्हीपाव परि गुरू रिसाया।।९७।।
मेरा खाली किया सराप। कन्हीपाव परलै तिहि पाप ।।
गुरु सूँ कपट जगत सूँ साच। पंथ त्रिफल होइ सिध की वाच।।९८।।

साखी :

सिद्ध बड़ाँ की बात कूँ, लोप्याँ भला न होइ।
कन्हीपाव के आसँगै, जलँध्री करी स जोइ ।।९९।।

चौपाई :

कन्हीपाव के कपट गुरु रूठा। सो जलन्ध्रि राजा पै तूठा ।।
अविगत की गति लखै न कोई। काहु को ले काहू कौं देई।।१००।।

साखी :

एक खड़ा ई जालई, एक खड़ा बिललाइ।
साँई मेरा सुलखणा, एक सूता देइ जगाइ ।।१०१।।

चौपाई :

कहरि नजरि कन्हीपाव हि जरै। तब राजा गोपीचंद डरै ।।
जो डर कियो भ्रम छूट्या जाई। यूँ त्रास देखि पलटे मुनिराई ।।१०२।।
कंचन भया लोह गुण मेट्या।। डर पारस जब प्रान हि भेट्या।
भूलौ सकल भयो भैभीत। हर्ताकर्ता कहिए अतीत ।।१०३।।

साखी :

कबीर भली भई जो भै पड्यो, गई दसा सब भूलि।
पाला गलि पाणी भया, ढुलि ज मिल्या उस कूलि।।१०४।।
भयभीत बिना भूलै नहीं, देह विदेह न कोइ।
साधू-जन के वचन सूँ, कीट भ्रंग लूँ जोइ ।।१०५।।

मरदुमशुमारी राज मारवाड़, सन् १८९१ में इन कालबेलियों के बारे में जो कुछ कहा गया है उसका सारांश निम्नानुसार है। इनके गुरुद्वारे का मुख्य ग्राम 'ढीकाई' परगना जोधपुर में बताया जाता है जहाँ कान्हीपाव की गद्दी है। कान्हीपाव जालंधरनाथजी के शिष्य थे। जनता को सुखी करने को ये साँप व बिच्छु वगैरह को पकड़कर दूर कर देते थे तथा अपनी सिद्धाई के जोर से जहर भी उतार देते थे। ये जड़ी-बूटी से भी चिकित्सा करते थे। इन्होंने अपने चेलों को भी यह काम सिखा दिया जो इनके चेलों की परम्परा अब तक यह काम करती आ रही है।

ये साँपों को पालते तो हैं ही, कभी-कभी खा भी जाते हैं जिस कारण इनको नाथ लोग अपनी जाति में नहीं मानते। नाथों के बारह पंथ हैं। उनमें इनकी गणना नहीं है। इनकी गणना आधे नाथों में होती है। इस कारण नाथों के साढ़े बारह भेष भी कहे

जाते हैं।

मूलतः कालबेलिया 'कारबारेया' शब्द था जिसका अर्थ हुआ 'जो कार अर्थात् भेष की 'सीमा', 'परिधि', 'परम्परा', 'आचार संहिता' से बाहर निकल गये, या निकाल दिये गये हों, वे 'कार बारेया' हैं। धीरे-धीरे बिगड़ते-बिगड़ते यह शब्द 'कार बेलिया' हो गया। (कार से बाहर निकलने अर्थात् भेष बाहर होने का कथानक पूर्ववर्ती पृष्ठों में आ गया है।) कान्हीपाव के नाम में 'पाव' शब्द जुड़ा हुआ है अतः ये 'पाव पंथी' भी कहलाते हैं। चूँकि नाथों के पंथ से इनको निकाल दिया गया किन्तु मूलतः हैं तो ये भी नाथ ही' अतः ये कान फड़वाकर 'दर्शन' (कुंडल, मुद्रा) नहीं पहनते, मुर्कियाँ पहनते हैं और उन मुर्कियों में ही इन कुंडलों को लटका लेते हैं। ये कुंडल-काँसी, पीतल या चांदी आदि धातु के होते हैं जिनको 'तुंगल' कहते हैं। कान के छेद में जंजीर डालकर उसको कानों के ऊपर तक ले जाते हैं जिससे कान का छेद लम्बा व चौड़ा नहीं होता। नाथ लोग गेंडे की खाल व काँच के भी कुंडल पहनते हैं किन्तु ये नहीं पहनते। प्रायः ये दो प्रकार के होते हैं- (१) खानाबदोश जो घूमन्तू होते हैं। ये प्रायः गाँव दर गाँव घूमते रहते हैं, साँप का पिटारा व पूंगी हमेशा साथ में रखते हैं। गाँवों के बाहर अस्थायी झोपड़ी बनाकर रुकते हैं और गाँव में जाकर साँपों का खेल दिखाते हैं। इनके शादी-विवाह इस घूमते-फिरते समय में ही हो जाते हैं। (२) दूसरे, गाँवों के बाहर स्थायी रूप से रहते हैं। कान नहीं फड़वाते। साँप नहीं पालते। अलबत्ता साँप-बिच्छुओं का झाड़ा अवश्य देते हैं। मेहनत-मजदूरी करके पेट भरते हैं।

घूमन्तू कालबेलियों का सामाजिक जीवनः राजस्थान के कालबेलिए जो घूमन्तू हैं; प्रायः अपनी खाँपें-पँवार, भाटी, सोलंकी, राठौड़ वगैरह बताते हैं। इनकी खाँपों के अनुसार इनके पेशे भी अलग-अलग थे। अब तो बहुत कुछ बदल गया है। पँवार आटा पीसने की चक्कियाँ बैलों पर लादकर बेचा करते थे। कुछ लोग भीख भी मांगते थे। भाटी लोग साँप पाला करते हैं। सोलंकी पूंगी बजाते हैं। राठौड़ कालबेलिए मजदूरी या भिक्षाटन करते हैं। कुछ कालबेलिए अपनी उत्पत्ति पाँच पाण्डवों में से अपने आपको अर्जुन की औलाद भी मानते हैं। वे कहते हैं, एक बार अर्जुन ने एक नाग-कन्या से भी विवाह किया था। उससे उसके एक 'नागा' नाम का पुत्र प्राप्त हुआ। अर्जुन उस नागकन्या के साथ परिस्थितियों के कारण नहीं रह सका। वर्षों पश्चात् जब नाग-कन्या अपने पुत्र के साथ अर्जुन से मिली तो अर्जुन ने दोनों को पहचाना नहीं। तब वह अर्जुन का पुत्र 'नागा' योगी होकर जंगल में रम गया। नाग-कन्या ने अपने पुत्र को नागों की विद्या सिखा दी, जिससे वह व उसके शिष्यादि नागों के संबंध में विशेषज्ञ हो गये। नागों का खेल दिखाने लगे। बाद में जब

कान्हीपाव के चेले सपेरे हुए तब दोनों मिल गए और घूमन्तु जीवन यापन करते रहे। जिस प्रकार बनजारों के डेरे फिरते रहते हैं, ऐसे ही इन सपेरों के डेरे फिरते रहते हैं। ये सपेरे फिरते-फिरते ही शादी-विवाह अपने साथ वाले डेरों में कर लेते हैं। इनके झगड़े-झंझट पंचायत में सुलझते हैं। ये बनजारों की तरह चोरी व उठाईगिरी का काम नहीं करते।

यदि कोई चोरी या जारी (परस्त्री-गमन) करता पाया जाता है तो उसको जात बाहर कर देते हैं। पाँच-सात वर्ष पश्चात् जब भी कभी उसको जात में, या कुनबे में वापिस शामिल करते हैं तब उसका सारा सामान-सट्टा जला देते हैं, उससे थोड़ा गांजा मंगवाकर पीते हैं और फिर उसको ओढ़ने-बिछाने का कुछ सामान देकर पुनः नये सिरे से उसका घर बँधवा देते हैं।

शादी-विवाह एवं नाता स्वयं की खाँप में न करके दूसरी खाँप में करते है।

सगाई करने की बात निश्चित् हो जाने पर लड़के का पिता लड़की के यहाँ एक रुपया, गुड़, गोला व सवा मीटर लाल कपड़ा थाली में रखकर ले जाता है। रुपये से कुंकूं लगाकर लड़की की मांग भरता है। थाली लड़की के पिता को ही दे देता है। लड़की का पिता अपने भाई-बांधवों को भोजन करा देता है, विवाह में सात फेरे होते हैं। विवाह का सारा कार्यक्रम गुरड़ा सम्पन्न कराता है। दुल्हन को उसका मामा गोद में उठाकर दूल्हे के डेरे में पहुँचा देता है। दूल्हा विवाह के लिये पैदल ही आता है। मामा दुल्हन को गोदी में पहुँचाता है तब लड़के का पिता उसको नेग के कुछ रुपये देता है। दूसरे दिन पहरावनी की रस्म अदायगी होती है जिसमें दोनों समधी मिलकर एक दूसरा एक दूसरे को अपनी-अपनी पछेवड़ी (ओढने की चद्दर, दुशाला, दोबड़ा आदि) ओढ़ाते है। दुल्हन को लड़के के परिवार के बड़े-बूढ़े की गोद में बैठाते हैं और कहते हैं 'अब यह आपकी है, इसकी सार-सँभाल आपको करनी है।' फिर मामा पहुँचा देता है जो उस समय दुल्हन का घोड़ा कहलाता है। मरने पर मृतक को साढ़े तीन हाथ के कपड़े में लपेट कर ले जाते हैं और चित सुलाकर गाड़ते हैं। जो 'हिंगलाज देवी' के दर्शन कर आता है, उसको बैठाकर गाड़ते हैं।

ये लोग शराब का सेवन करते हैं। सियार, लौकी, सुअर, हिरण, खरगोश, जर्ख, नाहर (शेर), सांडा, भैंसा, मुर्गा, नौलिया, साँप, गोहरा, गोह को खाते हैं किन्तु गाय, कबूतर, मोर और मरे हुए मवेशियों को नहीं खाते। ये लोग बांभी, मीणा, भील आदि का खा लेते हैं किन्तु ये जातियाँ इनका नहीं खातीं।

ये लोग कान्हीपाव की सौगंध को पक्की सौगंध मानते हैं। जब ढीकाई में मेला भरता है, तब वहाँ जाते हैं।

कालबेलियों के बाल प्रायः सफेद नहीं होते। इसका कारण बताते हुए कहते हैं कि हम लोग साँप का मांस खाते हैं। साँप का मांस खाने से बाल तो सफेद होते ही नहीं, और भी अनेक फायदे होना ये लोग बताते हैं। कहा जाता है कि सिरोही के राव अखयराज को एक बार एक कालबेलन ने सर्प का अर्क पिला दिया था जिसके प्रभाव से वह उड़ने की शक्ति पाकर उड़ने लगा और इतिहास में उसका नाम 'उड़निया अखैराज' हो गया।

कुछ कालबेलिए दस्तकारी का काम भी जानते तथा करते हैं। जुलाहों के ताने-बानों को साफ करने की बुश ये ही लोग बनाया करते थे। उस बुश को 'सुँआल' कहा जाता है।

गाँवों में रहने वाले कालबेलिए: ये प्रायः गाँव के बाहर झोपड़ों में रहते हैं। इनको नाथ व अन्य कालबेलिए, कालबेलिए न मानकर थोरी व भील बताते हैं जबकि ये अपने आपको 'पाव पंथी', 'कान्हीपाव की शिष्य-परम्परा' के मानते हैं। ढीकाई को अपना गुरुद्वारा मानते हैं। मेले में जाते हैं। होली, दीपावली, अक्षय तृतीया जैसे त्योहार मनाते हैं।

इनका मुख्य पेशा मेहनत-मजदूरी करना है किन्तु कोई-कोई सर्प का जहर भी उतारते हैं। कानों में 'तुंगल' कोई-कोई पहनता है किन्तु भगवे रंग की पगड़ी या पोतिया अवश्य माथे पर रखते हैं। इनकी स्त्रियाँ भगवा रंग का दुपट्टा भी कभी-कभी ओढ़ती हैं। कुछ लोग छत वगैरह बनाने का काम भी करते हैं। खेती प्रायः नहीं करते। सगाई-विवाह गुरड़ा सम्पन्न करवाता है। फेरे सात होते हैं। मन पसंद औरत रखते हैं। पहले तो एक से अधिक औरतें भी रखते थे किन्तु अब गैर-कानूनी होने से नहीं रखते। रखैल रखने का भी इनके यहाँ रिवाज पहले था। नाता-प्रथा इनके यहाँ प्रचलित है। नाता प्रायः शनिवार की आधी रात्रि व्यतीत होने के बाद करते हैं। विवाह और नाता दादा, नाना, फूफी और मौसी की खाँपों को छोड़कर अन्यों के साथ करते हैं। इनकी खाँपों के नाम हैं-दइया, भाटी, सोलंकी, बाघेला, सीसोदिया, राठौड़, देवड़ा, गोयल, पँवार, चौहान, परिहार वगैरह।

निहंग विरक्त इनमें से कोई हो तो हो, नहीं तो सभी गृहस्थ होते हैं।

मरने पर मुर्दे को सीढ़ी में ले जाते हैं। दक्षिण की तरफ मुँह व उत्तर की ओर पैर करके लम्बा सुलाकर गाड़ते हैं। दाग देने के बाद घर आकर साथ वालों को भोजन करा देते हैं। एक दिन का शोक रखते हैं। इसके बाद अन्य कुछ नहीं करते।

इनका कोई महन्त नहीं होता। दीक्षित होने के लिये आपस में ही गुरु चेले बन जाते हैं। जब कोई शिष्य बनता है तब योगमाया के नाम की ज्योति दीपक जलाते हैं, भजन

गाते हैं।

इनमें से कुछ गाने-बजाने का काम भी करते हैं। पूंगी अच्छी बजाते हैं। खंजरी, इकतारा, तन्दूरा आदि बजाते हैं। भरथरी-गोपीचन्द्र के वैराग्य की करुणा भरी गाथा को गाते हैं। कुछ-कुछ मंत्र-तंत्र भी करते हैं। उंगली से गंगा चलाते हैं। हर जगह से साँप निकाल देते हैं। इनमें से कोई-कोई रावल जोगी बनकर भीख मांगकर भी खाते हैं।

शिव, पार्वती की पूजा करते हैं। आक, धतूरा, केशर, धूप वगैरह चढ़ाते हैं। हिंगलाज देवी के दर्शन करने जाते हैं। वहाँ से 'ठूमरे' जो पत्थर जैसे दाने होते हैं, को लाते हैं और पानी में उबालकर उनको नरम कर लेते हैं। फिर रेशम व सादा धागे में पोकर माला बना लेते और पहनते हैं।

साँप, गोहरा, स्याल और लोमड़ी वगैरह खाते हैं किन्तु गाय, घोड़ा, मोर, कबूतर कौवा और मरा हुआ जानवर नहीं खाते। रोटी हिन्दू-मुसलमान सभी की खा लेते हैं। आपसी झगड़े अपनी पंचायत में ही निवेड़ लेते हैं। राज्य के कोर्ट आदि में नहीं जाते।

गोगाजी चौहान और उनका नागों से संबंधः अब एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु पर विचार करना और आवश्यक है, वह है गोगा पीर व साँपों से उनका संबंध।

यह एक अबूझ पहेली ही रही है कि गोगाजी का संबंध सर्पों से कैसे जुड़ा। इनके थानों पर इनकी सर्प की आकृति में ही पूजा की जाती है।

डॉ० दशरथ शर्मा, गोविन्द अग्रवाल और अन्यान्य बड़े-बड़े इतिहासकार जिन्होंने गोगा चौहान पर विस्तार से प्रामाणिक लेखन किया है और जिनके कारण इनका समय, इनकी पीढ़ियाँ, जीवनी आदि सुनिश्चित् हुए हैं, भी इस गुत्थी को सुलझा नहीं सके। हम आगे इसी मुद्दे पर चर्चा करने जा रहे हैं।

स्वर्गीय डॉ० दशरथ शर्मा, 'चौहान वंशीय इतिहास' के ही नहीं, प्राचीन इतिहास, साहित्य, पुरातत्त्व आदि के बेजोड़ विद्वान् थे। उनको भी इस बात ने चक्कर में डाले रखा कि आखिरकार गोगा चौहान का सर्पों से क्या संबंध है? इसके संबंध में उन्होंने 'मरु भारती', वर्ष ९, अंक ४ में निम्न बातें लिखी हैं-

''हम लोग लेखों द्वारा ददरेवा के चौहान शासक गूगोजी का समय निश्चित करने का प्रयत्न कर चुके हैं किन्तु जनमानस में व्याप्त गूगोजी की कथा में कुछ ऐसे तत्त्व हैं जिन्हें समझने के लिए चौहान गूगोजी का इतिवृत्त पर्याप्त नहीं है। बहुत संभव है कि जनमानस के वृत्त में अन्य गूगा कथाएँ भी आ मिली हों। यह ठीक हैं कि चौहान गूगोजी महान् वीर थे, अतः वीर रूप में उनका पूजित होना सर्वथा संगत है किन्तु उनसे सर्पों का संबंध होने का क्या कारण है यही प्रश्न प्रायः हर एक अन्वेषक के

मस्तिष्क में चक्कर लगाता रहता है। संभव है कि इस दिशा में वि०सं० ७७० के गूगा के अभिलेख से हमें कुछ सहायता मिल सके। उपर्युक्त लेख ब्रिटिश म्यूजियम में है। इसका समुचित सम्पादन अब तक नहीं हुआ है किन्तु कीलहार्न के टिप्पणी के आधार पर डॉ० देवदत्त रामकृष्ण भांडाकार ने इस अभिलेख के विषय में ये शब्द लिखे हैं (इंस्क्रिप्सन्स ऑफ नार्दर्न इण्डिया, संख्या १५)

संवत्सर शतैतीते सप्तमे चाधिकैस्तथा (२२ पंक्ति) पूण्णें सप्तभिर्वर्षे निम्मिर्मतं तु पुरंतदा।''

Nagendra, Son of a Parameshvara Whose name is lost had a daughter subha Who was married to Taksharaja Son of Devaraja- Their Son was Gugga Engraved by Gunasila-

जिस अभिलेख के आधार पर ये शब्द लिखे गये हैं वह स्पष्टत: काफी लम्बा है। उसकी २२वीं पंक्ति से हमें ज्ञात होता है कि सम्वत् ७७० में गुग्ग ने किसी नगर का निर्माण कराया। अभिलेख इसी बात के उल्लेख के रूप में है। गुणशील ने लेख उत्कीर्ण किया है।

इससे अधिक महत्त्वपूर्ण इस अभिलेख की वंशावली है इसके अनुसार उसकी माँ का नाम शुभा, बाप का तक्षराज और नाना का नाम नागेन्द्र था।

नागेन्द्र किसी परमेश्वर (महाराजाधिराज) का पुत्र था जिसका नाम लेख से लुप्त हो गया है। दादा का नाम देवराज था। इन नामों को पढ़ते ही आपातत: यही धारणा उत्पन्न होती है कि गुग्ग के पिता और नाना दोनों ही नागवंशी थे। एक का नाम तक्षराज तो दूसरे का नागेन्द्र था। नागराज तक्षराज के पुत्र और स्वयं नागराज होने से इस गुग्ग का नागों से संबंध होना स्वाभाविक है।

यह भी संभव है कि इस नागराज ने मुसलमानों से युद्ध किया हो। संवत् ७६९ (सन् ७१२) में मुहम्मद बिन कासिम ने सिंध पर विजय प्राप्त की। इसके बाद किसी साल में गुग्ग और मुसलमानों के युद्ध की संभावना की जा सकती है। सन् ७२५ में अरब सेनापति जुनैद ने भिल्लमाल, मालवा आदि अनेक जनपदों को जीता। क्या गुग्ग ने इसी अरब सेनापति से युद्ध किया? मैं स्वयं इस विषय पर कुछ राय नहीं रखता किन्तु विषय को गवेष्य अवश्य समझता हूँ।'(पृष्ठ-११५-११६, 'गोगाजी चौहान री राजस्थानी लोकगाथा' सम्पा० डॉ० चन्द्रदान चारण, सन् २००० का संस्करण) उक्त अवतरण में डॉ दशरथ शर्मा के गोगा ने पूर्वजों को नागवंशी बताकर उनका नागों से कुल-परंपरया संबंध बताया है।

राजस्थान, हरियाणा आदि में प्रचलित गोगाजी चौहान की लोक-गाथाओं के अनुसार

ज्ञात होता है कि जब गोगा के पिता जेवर को पता लगा कि उसकी पत्नी बाछल, नाथों के डेरों पर जाती है तब जेवर ने पत्नी को बहाना बनाकर उसके पीहर भेज दिया, किन्तु उदरस्थ गोगा नाना के यहाँ जाने को तैयार नहीं थे; उन्होंने उस बहली (जो रथ, बैलों से चलता था वह 'बहली' कहलाता था) के बैल को डस लिया जिसके कारण माता बाछल का रथ रुक गया। बियाबान जंगल में पेट में से ही गोगा ने माँ से कहा कि माँ! आप पीहर न जाकर पुनः ददरेवा लौटो। माँ ने कहा, कैसे लौटूँ। बैल को सर्प ने डस लिया है। तब गोगा के कहने पर बाछल ने गोगा के नाम की ऊतरी (धागा) बैल के गले में बाँध दी। तत्काल बैल जी उठा। बाछल ददरेवा को लौट आई।

गोगा के उक्त नागों/सर्पों के संबंध के आधार पर ही उनका सर्पों से संबंध अन्वेष्य है जिनमें से एक कारण ऊपर डॉ० दशरथ शर्मा के कथन के अनुसार उद्धरित किया गया है किन्तु उक्त मन्तव्य को मानने में सबसे बड़ा व्यवधान कालिक प्रमाण है क्योंकि शिलालेखीय प्रमाणों, गोगाजी चौहान की वंशावली व वंशावली के संबंध में प्राप्त ऐतिहासिक प्रमाण सिद्ध करते हैं कि गोगाजी ईसा की दसवीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश से लेकर सन् १०१२ ई० तक जीवित थे। वे सन् १०१२ में महमूद गजनवी से लड़ते हुए मारे गये जब गजनवी ने थानेश्वर पर आक्रमण किया ('गोगादेव चौहान परम्परा और इतिहास', ले० विन्ध्यराज चौहान, पृष्ठ-१५८, सन् २०१८ का प्रथम संस्करण)

गोगाजी के समय के लिये मैंने मेरी पुस्तक 'योगिराज गोरखनाथ' में भी विस्तृत चर्चा की है।

उक्त कालिक प्रमाण के आलोक में डॉ दशरथ शर्मा का मत मानना संभव नहीं। वस्तुतः लोकगाथाओं के अनुसार गोगाजी की माता बाछल को सर्वप्रथम गोरखनाथ ने नहीं, कान्हीपाव ने पुत्र होने का आशीर्वाद दिया था। उनके आशीर्वादानुसार व परामर्शानुसार बाछल ने गोरखनाथ की सेवा-अभ्यर्थना कर पुत्र पाया था।

चूँकि ऊपर हमने सिद्ध किया है कि कान्हीपाव को सर्पों को खिलाने को शाप गुरु जालंधरनाथ से मिला था। सर्पों से कान्हीपाव का निकटतम संबंध था। अतः कान्हीपाव के कारण ही गोगाजी चौहान को सर्पों से बराबर सहायता मिलती रही। वे अपने गुरु के कारण सर्पों के देवता माने जाते हैं। उनकी आज भी उनके थानों पर सर्प के रूप में ही सेवा-पूजा होती है।

अतः मेरा दृढ़ मन्तव्य है कि गोगाजी का सर्पों से संबंध कान्हीपाव के कारण है और कान्हीपाव की कृपा से ही बाछल पुनः अपने ससुराल में आई तथा गोगा का जन्म

हुआ।

राजस्थान में प्रचलित लोकगाथाओं का संबंधित पाठ यहाँ दिया जा रहा है जिससे ज्ञात होगा कि गोगाजी की माता बाछल को पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद कान्हीपाव से ही मिला, गोरखनाथ से नहीं।

चूँकि राजस्थान में उस समय गोरखनाथ ही एक मात्र प्रभावशाली नाथ संन्यासी थे। अत: गोगाजी के साथ कान्हीपाव की जगह गोरखनाथ का नाम जुड़ गया। लोकगाथाएँ स्पष्टत: कान्हीपाव का उल्लेख करती हैं।

गोगाजी चौहान री राजस्थानी-गाथा

अलख अलख ने याद करूँ बाबा, भगवाँ तो भेख रमाणा
मैं तो पूहूँ मेरा कणैयाचेला, भाव नगर री रब लाणा
काळी सेली गळ बिच घालो, अंक भभूत रमाणा
काँय की झोळी बाबा काँय का पत्तर, काँय का आड़बन्ध लाणा
सत की झोली सबदी का पत्तर, मनसा का अड्बंध लाणा
कर लटकारौ चाल्यो कणैया, गढ़ ददरेवै जावै
गढ़ ददरेवै में छोरा खेलै, सतियाँ रा घर बतलाणा
एक सती बाबा सरियाकुमारी, दूजौ जती हेमासा बणिया
तीजी सती बाछल मैया, चौथा नगर सवाणा
कर लटकारौ चाल्यो कणैया, सरिया रै अलख जगावै
फूटा-टूट्या बरतण दे-दै माई, गुरु मेरे फरमावै
चावळ मूंगाँ री भिख्या लायी, ले-लै रावळिया जागा
आ भिक्षा घर-बारी लेवै, गुरु मेरे फरमावै
पहली चोट चलायी सिरिया, चीपी री ढाल बणावै
दूजी चोट चलावै कणैया, पीढ़ा अंग चिपटावै
तेरै नगर में मैया कैर वाँ रा कूवा, जिण रो तो जळ भर लावो
(जाती है, पर सिला हटती नहीं, पानी लाने में मजबूर)
कर लटकारौ कणैया चाल्यो, सिल ऊँची उठ जावै
काचे तागाँ सूँ कूवौ जोड़ायो, झारी में जळ भर लावै
पैली चोट चीपी पर मारै, चीपी सेर बणावै
दूजी चोट पीढ़े पर मारै, पीढ़ा झट पड़ जावै
अेक घर फिरिया, दो घर फिरिया, घर बाछल रै आया

जहाँ-जहाँ 'कणैया' शब्द आया है, वह 'कान्हौपाव' का सूचक अथवा ज्ञापक है। 'कान्हीपाव' नाथयोगी थे। जालन्धरनाथ के शिष्य थे। प्रसिद्ध गोपीचन्द्रनाथ भी कान्हीपाव के कारण ही जीवित बचकर अमर हो सके अत: कहीं-कहीं गोपीचन्द्रनाथ के गुरु के रूप में भी कान्हीपाव का ही नाम लिखा मिलता है।

जोगी ने अलख जगाया ए, माता बाछल न्हावण संजोया
आगे नहीं आवणा, पाछा नहीं जावणा, बाछल राणी न्हावण संजोया
चावळ मूंगाँ री भिख्या लाई, लेवौ रावळिया जोगी
चावल मूंगाँ री भिख्या लेसी घर-बारी, गुरु मेरे फरमावै
बालै रा जूठा टुकड़ा घालौ, जोगी अलख जगावै
बालै रो नाँव मत लै रे रावळिया जोगी, बालै रो नाँव मत लेवौ
लियो कँवर रो नाँव जोगी, बाछल झर-बर रोवै
छाती भरीजै हियौ ऊमटै, मेरा रावळिया जोगी
बालै रो नाँव मत लैवो, साच बता दे मैया बाछला, तैं कौण जोगी सेया
सेया मैं लकड़नाथ, मेरी लकड़ होगी काया
सेवा मैं फळ कोनी पाया रावळिया जोगी, सेवा में फळ कोनी पाया
साच बता दै अम्मा बाछला, तैं कौण जोगी सेया
सेया मैं दूधाधारी, मेरी दूध होगी काया
सेवा मैं फल कोनी पाया रावळिया जोगी, सेवा में फल कोनी पाया
(और तो) बताओ अम्मा बाछला, तैं कौण जोगी सेया
सेया जोगी जलंधरनाथ मैं, मेरी जळ तो होगी काया
सेवा में फळ कोनी पाया रावळिया जोगी, सेवा में फळ कोनी पाया
साच बतावौ मैया बाछला, तैं कौण जोगी सेया
सेया मैं धूणीनाथ जोगी, मेरी धूणी होगी काया
सेवा में फल कोनी पाया सबळिया जोगी, सेवा में फल कोनी पाया
तो बतावौ मैया बाछला, तैं कौण जोगी सेया
सेया मै जोगी मछंदरनाथ, मेरी मच्छर होगी काया
सेवा में फळ कोनी पाया रावळिया जोगी, सेवा में फल कोनी पाया
म्हें तनैं कैवाँ अम्मा बाछला, गुरु गोरखनाथ मैं, गोगो एक फल पाया।

■

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज

पुराणों के विषय में कुछ विशेष बातें

*आचार्य नवनीत

पुराणों के मुख्य आचार्य -पुराणों के छः आचार्य प्रसिद्ध हैं- त्रय्यारुणि, कश्यप, सावर्णि, अकृतव्रण, वैशम्पायन और हारीत । इन लोगों ने रोमहर्षण जी से एक-एक पुराणसंहिता पढ़ी थी और रोमहर्षण जी ने भगवान् व्यास से उन संहिताओं का अध्ययन किया था। सूत जी ने छहों आचार्यों से सभी संहिताओं का अध्ययन किया था। उन छः संहिताओं के अतिरिक्त और भी चार मूल संहिताएँ थीं उन्हें भी कश्यप, सावर्णि, परशुरामजी के शिष्य अकृतव्रण और उन सबके साथ सूत जी ने व्यासजी के शिष्य श्रीरोमहर्षणजी से,अध्ययन किया था ।।

पुराणों के नाम और क्रम संख्या - पुरातत्त्ववेत्ता ऐतिहासिक विद्वानों द्वारा पुराणों की संख्या छोटे-बड़े अठारह पुराण बताये हैं। उनके नाम ये हैं - ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण, विष्णुपुराण, शिवपुराण, लिङ्गपुराण, गरुड़पुराण, नारदपुराण, भागवतपुराण, अग्निपुराण, स्कन्दपुराण, भविष्यपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण, मार्कण्डेयपुराण, वामनपुराण, वराहपुराण, मत्स्यपुराण, कूर्मपुराण और ब्रह्माण्डपुराण यह अठारह हैं ।।

पुराणों में कितनी श्लोक संख्या है -

ब्राह्मं दशसहस्त्राणि पाद्यं पञ्चोनषष्टि च।
श्रीवैष्णवं त्रयोविंशच्चतुर्विंशति शैवकम् ।। ४ ।।
दशाष्टौ श्रीभागवतं नारदं पञ्चविंशतिः ।
मार्कण्डेयं नव वाह्नं च दशपञ्च चतुःशतम् ।। ५ ।।
चतुर्दश भविष्यं स्यात्तथा पञ्चशतानि च।
दशाष्टौ ब्रह्मवैवर्त लिङ्गमेकादशैव तु ।। ६ ।।
चतुर्विंशति वाराहमेकाशीतिसहस्त्रकम् ।
स्कान्दं शतं तथा चैकं वामनं दश कीर्तितम् ।। ७ ।।
कौर्मं सप्तदशाख्यातं मात्स्यं तत्तु चतुर्दश ।
एकोनविंशत्सौपर्णं ब्रह्माण्डं द्वादशैव तु ।। ८ ।।
एवं पुराणसन्दोहश्चतुर्लक्ष उदाहृतः ।
तत्राष्टादशसाहस्त्रं श्रीभागवतमिष्यते ।। ९ ।।

ब्रह्मपुराण में दस हजार श्लोक, पद्मपुराणमें पचपन हजार, श्रीविष्णुपुराण में तेईस हजार और शिवपुराण की श्लोकसंख्या चौबीस हजार है। श्रीमद्भागवत में अठारह हजार, नारदपुराण में पचीस हजार, मार्कण्डेयपुराण में नौ हजार तथा अग्निपुराण में पन्द्रह हजार चार सौ श्लोक

हैं, भविष्यपुराण की श्लोक- संख्या चौदह हजार पाँच सौ है और ब्रह्मवैवर्तपुराण की अठारह हजार तथा लिङ्गपुराण में ग्यारह हजार श्लोक हैं। वराहपुराण में चौबीस हजार, स्कन्दपुराण की श्लोक-संख्या इक्यासी हजार एक सौ है और वामनपुराण की दस हजार कूर्मपुराण सत्रह हजार श्लोकों का और मत्स्यपुराण चौदह हजार श्लोकों का है। गरुड़पुराण में उन्नीस हजार श्लोक हैं और ब्रह्माण्डपुराण में बारह हजार। इस प्रकार सब पुराणों की श्लोक-संख्या कुल मिलाकर चार लाख होती है। उनमें श्रीमद्भागवत, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अठारह हजार श्लोकों का है ।

पुराणों के १० मुख्य लक्षणों के बारे में -

विश्वसर्ग, विसर्ग, वृत्ति, रक्षा, मन्वन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था (प्रलय), हेतु (ऊति) और अपाश्रय। कोई-कोई आचार्य पुराणों के पाँच ही लक्षण मानते हैं। दोनों ही बातें ठीक हैं, क्योंकि महापुराणों में दस लक्षण होते हैं और छोटे पुराणों में पाँच।

१-जब मूल प्रकृतिमें लीन गुण क्षुब्ध होते हैं, तब महत्तत्त्व की उत्पत्ति होती है। महत्तत्त्व से तामस, राजस और वैकारिक (सात्त्विक)-तीन प्रकार के अहङ्कार बनते हैं। त्रिविध अहङ्कार से ही पञ्च- तन्मात्रा, इन्द्रिय और विषयों की उत्पत्ति होती है। इसी उत्पत्ति क्रम का नाम 'सर्ग' है ।

२-परमेश्वर के अनुग्रह से सृष्टि का सामर्थ्य प्राप्त करके महत्तत्त्व आदि पूर्वकर्मों के अनुसार अच्छी और बुरी वासनाओं की प्रधानता से जो यह चराचर शरीरात्मक जीव की उपाधि की सृष्टि करते हैं, एक बीज से दूसरे बीज के समान, इसी को विसर्ग कहते हैं ।

३-चर प्राणियों की अचर-पदार्थ 'वृत्ति' अर्थात् जीवन-निर्वाह की सामग्री है। चर प्राणियों के दुग्ध आदि भी है। इनमें से मनुष्यों ने कुछ तो स्वभाव वश कामना के अनुसार निश्चित कर ली है और कुछ ने शास्त्र के आज्ञानुसार ।

४-भगवान् युग-युग में पशु-पक्षी, मनुष्य, ऋषि, देवता आदि के रूपमें अवतार ग्रहण करके अनेक लीलाएँ करते हैं। इन्हीं अवतारों में वे वेदधर्म के विरोधियों का संहार भी करते हैं। उनकी यह अवतार-लीला विश्व की रक्षा के लिये ही होती है, इसीलिये उसका नाम 'रक्षा' है

५-मनु, देवता, मनुपुत्र, इन्द्र, सप्तर्षि और भगवान् के अंशावतार - इन्हीं छः बातों की विशेषता से युक्त समयको 'मन्वन्तर' कहते हैं ।

६-ब्रह्माजी से जितने राजाओं की सृष्टि हुई है, उनकी भूत-भविष्य और वर्तमानकालीन सन्तान-परम्परा को 'वंश' कहते हैं।

७-उन राजाओं के तथा उनके वंशधरों के चरित्र का नाम 'वंशानुचरित' है।

८-इस विश्व ब्रह्माण्ड का स्वभाव से ही प्रलय हो जाता है। उसके चार भेद हैं- नैमित्तिक, प्राकृतिक, नित्य और आत्यन्तिक । तत्त्वज्ञ विद्वानों ने इन्हीं को 'संस्था' कहा है।

९-पुराणों के लक्षण में 'हेतु' नाम से जिसका व्यवहार होता है, वह जीव ही है; क्योंकि वास्तव में वही सर्ग-विसर्ग आदि का हेतु है और अविद्यावश अनेक प्रकार के कर्मकलाप में

उलझ गया है। जो लोग उसे चैतन्य प्रधान की दृष्टि से देखते हैं, वे उसे अनुशयी अर्थात् प्रकृति में शयन करने वाला कहते हैं; और जो उपाधि की दृष्टि से कहते हैं, वे उसे अव्याकृत अर्थात् प्रकृतिरूप कहते हैं

१०-जीव की वृत्तियों के तीन विभाग हैं- जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति । जो इन अवस्थाओं में इनके अभिमानी विश्व, तैजस और प्राज्ञ के मायामय रूपों में प्रतीत होता है और इन अवस्थाओं से परे तुरीयतत्त्व के रूप में भी लक्षित होता है, वही ब्रह्म है; उसी को यहाँ 'अपाश्रय' शब्दसे कहा गया है

पुराणों को पढ़ने का जीवन में लाभ - नामविशेष और रूपविशेष से युक्त पदार्थों पर विचार करें तो वे सत्तामात्र वस्तु के रूप में सिद्ध होते हैं। उनकी विशेषताएँ लुप्त हो जाती हैं। असल में वह सत्ता ही उन विशेषताओं के रूप में प्रतीत भी हो रही है और उनसे पृथक् भी है। ठीक इसी न्याय से शरीर और विश्वब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से लेकर मृत्यु और महाप्रलय पर्यन्त जितनी भी विशेष अवस्थाएँ हैं, उनके रूप में परम सत्यस्वरूप ब्रह्म ही प्रतीत हो रहा है और वह उनसे सर्वथा पृथक् भी है। यही वाक्य-भेद से अधिष्ठान और साक्षी के रूप में ब्रह्म ही पुराणोक्त आश्रयतत्त्व है। जब चित्त स्वयं आत्मविचार अथवा योगाभ्यास के द्वारा सत्त्वगुण-रजोगुण-तमोगुण-सम्बन्धी व्यावहारिक वृत्तियों और जाग्रत-स्वप्न आदि स्वाभाविक वृत्तियों का त्याग करके उपरम हो जाता है, तब शान्तवृत्ति में 'तत्त्वमसि' आदि महावाक्यों के द्वारा आत्मज्ञान का उदय होता है। उस समय आत्मवेत्ता पुरुष अविद्याजनित कर्म-वासना और कर्मप्रवृत्ति से निवृत्त हो जाता है और मनुष्य जीवन मरण के चक्र से छूटकर भगवान की भक्ति द्वारा उन्ही में लीन हो जाता है ।

त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये।
तेन त्वदङ्घ्रिकमले रतिं मे यच्छ शाश्वतीम् ॥ ॥

हे गोविन्द (श्रीकृष्ण)! आपकी वस्तु (जो कुछ भी मेरे पास है) आपको ही समर्पित है। उसे आप प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करें और मुझे अपने चरण-कमलों में शाश्वत प्रेम प्रदान करें।

■

महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्,गोरखपुर
संस्थापक सप्ताह–समारोह 2025
(4 दिसम्बर से 10 दिसम्बर)
मो. : 9140775309
9807715902
9451851216
प्रतियोगिता परिणाम एवं अन्य जानकारी के लिए देखें website – www.mpspgkp.in

मुख्य संरक्षक : गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज, माननीय मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश

डॉ. नितीश शुक्ला
सदस्य-संचालन समिति
महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्
गोरखपुर

संस्थापक सप्ताह समारोह-२०२५ का संक्षिप्त विवरण

श्री गोरक्षपीठ, गोरखनाथ मन्दिर गोरखपुर (उ०प्र०) द्वारा संचालित महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् की स्थापना पूर्वी उत्तर प्रदेश को केन्द्र बनाकर सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के ध्वजवाहक युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज ने १९३२ ई. में की थी। सम्प्रति में महायोगी गोरखनाथ विश्वविद्यालय गोरखपुर सहित लगभग ५२ शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थाएं महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् द्वारा संचालित हो रही हैं। महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् द्वारा प्रति वर्ष ०४ से १० दिसम्बर तक संस्थापक सप्ताह समारोह आयोजित किया जाता है। जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों में अन्तर्निहित प्रतिभा की पहचान कर बहुमुखी विकास सुनिश्चित करना है। इस प्रकार के आयोजन राष्ट्रीय शिक्षा नीति-२०२० के उद्देश्यों के अनुपूरक हैं। इस आयोजन के माध्यम से संस्थायें अपने अनवरत विकास का मूल्यांकन करते हुए एक-दूसरे से प्रेरणा प्राप्त कर अपने उद्देश्य पथ पर निरन्तर अग्रसर हो रहीं है।

इस वर्ष सप्ताह भर चलने वाले इस भव्य समारोह में महन्त दिग्विजयनाथ राज्य स्तरीय प्राइजमनी बास्केटबाल प्रतियोगिता, महन्त अवेद्यनाथ राज्य स्तरीय प्राइजमनी वॉलीबाल प्रतियोगिता, राज्य स्तरीय भाषण प्रतियोगिता वरिष्ठ वर्ग (हिन्दी, संस्कृत एवं अंग्रेजी), सर्वोत्तम एन.सी.सी. कैडेट चयन, योगासन, पी.टी. चित्रकला, अन्त्याक्षरी, सामान्य ज्ञान, हिन्दी-अंग्रेजी सुलेख, श्रीरामचरितमानस, श्रीमद्भगवद्गीता, हिन्दी भाषण, संस्कृत भाषण, अंग्रेजी भाषण, गोरखवाणी, संगीत गायन आदि प्रतियोगिताओं के साथ वॉलीवाल, कबड्डी आदि विविध प्रतियोगिताओं के विभिन्न स्तर की कुल ५६ प्रतियोगितायें आयोजित की गयी। इस वर्ष इस समारोह में महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् की समस्त संस्थाएँ, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, मदन मोहन मालवीय प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बनारस

हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, ऐरा मेडिकल यूर्निवसिटी, लखनऊ, सहित उ०प्र० के विभिन्न विश्वविद्यालयों व गोरखपुर मण्डल की विभिन्न शिक्षण संस्थाओ सहित कुल ११५ संस्थाओं के ५१०३ प्रतिभागियों ने विभिन्न प्रतियोगिता में प्रतिभाग किया। इसी क्रम में संस्थापक सप्ताह समारोह में महन्त दिग्विजयनाथ राज्य स्तरीय प्राइजमनी, बास्केटबाल प्रतियोगिता में प्रदेश की १० टीमें तथा महन्त अवेद्यनाथ राज्य स्तरीय प्राइजमनी वॉलीवाल प्रतियोगिता में प्रदेश की १० टीमों ने प्रतिभाग किया।

राज्य स्तरीय भाषण प्रतियोगिता के हिन्दी विषय में १३ राज्य व केन्द्रीय विश्वविद्यालय, संस्कृत विषय में १० राज्य व केन्द्रीय विश्वविद्यालय एवं अंग्रेजी विषय में १३ राज्य व केन्द्रीय विश्वविद्यालय की टीमों ने प्रतिभाग किया।

संस्थापक सप्ताह समारोह-२०२५ में ०७ स्वर्ण पदक, १४ महत्त्वपूर्ण स्मृति पुरस्कार, ०१ विशेष छात्रवृत्ति, अनुशासन एवं श्रेष्ठ पथ संचलन पुरस्कार, शोभा यात्रा में सर्वोत्तम एन.सी.सी. दल का पुरस्कार, एन.सी.सी. की ०९ बटालियन, ११ घोष दल, आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों, योग्यता छात्रवृत्ति, क्रीड़ा छात्रवृत्ति, एन.सी.सी. क्रीड़ा छात्रवृत्ति सहित कुल १३५३ प्रतिभागियों को पुरस्कृत किया गया। इसी क्रम में राज्यस्तरीय बॉस्केटबाल एवं वॉलीवाल प्रतियोगिता में खिलाड़ियों, कोच एवं आफिसियल सहित ३०१ लोगों को ट्रैकसूट देकर सम्मानित किया गया।

इस वर्ष संस्थापक सप्ताह समारोह में आयोजित प्रतियोगिताओं में महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद की संस्थाओं में महाराणा प्रताप चिल्ड्रेन ऐकेडमी सिविल लाइन, महाराणा प्रताप कन्या इण्टर कालेज, रामदत्तपुर, महाराणा प्रताप इण्टर कालेज, सिविल लाइन एवं महाराणा प्रताप महिला पी.जी. कालेज रामदत्तपुर, गोरखपुर ने शत-प्रतिशत प्रतियोगिताओं में प्रतिभाग किया।

योगी कमलनाथ जी, प्रधान पुजारी गोरखनाथ मन्दिर की अध्यक्षता में १६ दिसम्बर को आयोजित समीक्षा बैठक में संस्थाओं को उनकी प्रतिभागिता एवं पुरस्कार से सम्बन्धित विस्तृत जानकारी महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद के सदस्य श्री प्रमथ नाथ मिश्र ने दिया। डॉ० एस०पी० सिंह, सदस्य, महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद ने महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद के शताब्दी वर्ष समारोह की तैयारी हेतु आवश्यक निर्देश दिया। साथ ही आगामी वर्ष में संस्थापक सप्ताह समारोह २०२६ की तैयारी हेतु संचालन समिति एवं संरक्षक मण्डल की प्रथम बैठक अक्टूबर, २०२६ के प्रथम सप्ताह में आयोजित किये जाने का निर्णय लिया गया।

संस्थापक सप्ताह समारोह-२०२५ विशेष

उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता- परम पूज्य गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज, मा० मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश।

उद्घाटन समारोह के मुख्य अतिथि- ले०ज० योगेन्द्र डिमरी, उपाध्यक्ष, राज्य आपदा प्रबन्धन आयोग, उ०प्र०।

मुख्य महोत्सव एवं पारितोषिक वितरण समारोह के मुख्य अतिथि- ले०ज० गुरमीत सिंह, मा० राज्यपाल उत्तराखण्ड ।

मुख्य महोत्सव एवं पारितोषिक वितरण समारोह की अध्यक्षता- परम पूज्य गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महराज, मा० मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश।

राज्य स्तरीय बॉस्केटबाल एवं वॉलीबाल प्रतियोगिता के उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता - श्री राजेश मोहन सरकार, उपाध्यक्ष, महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्, गोरखपुर।
मुख्य अतिथि - श्री चन्द्र विजय सिंह, अन्तर्राष्ट्रीय कुश्ती खिलाड़ी, कोच भारतीय कुश्ती टीम।

राज्य स्तरीय बॉस्केटबाल एवं वॉलीबाल प्रतियोगिता के समारोप सत्र की अध्यक्षता-श्री रामजन्म सिंह, सदस्य, महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्, गोरखपुर।
मुख्य अतिथि - श्री दिनेश सिंह, अन्तर्राष्ट्रीय पहलवान।

श्रेष्ठतम संस्था का महायोगी गुरु श्री गोरक्षनाथ स्वर्ण पदक- दिग्विजयनाथ बालिका इण्टर कालेज, चौक बाजार, महराजगंज ।

श्रेष्ठतम परिचारक का ब्रह्मलीन बाबा गोपालनाथ स्वर्ण पदक-श्री रमाकान्त, दिग्विजयनाथ इण्टर कालेज, चौक बाजार, महराजगंज।

श्रेष्ठतम कर्मचारी का योगिराज बाबा ब्रह्मनाथ स्वर्ण पदक-श्री अश्वनी कुमार गुप्ता, महाराणा प्रताप कन्या इण्टर कालेज, रमदत्तपुर, गोरखपुर।

श्रेष्ठतम शिक्षक का योगिराज बाबा गम्भीरनाथ स्वर्ण पदक- श्रीमती शिप्रा सिंह,

महाराणा प्रताप महाविद्यालय, जंगल धूषण, गोरखपुर।

स्नातकोत्तर के श्रेष्ठतम विद्यार्थी का ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ स्वर्ण पदक- श्री शिवम पाण्डेय, महायोगी गोरखनाथ विश्वविद्यालय, बालापार, गोरखपुर।

स्नातक के श्रेष्ठतम विद्यार्थी का ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ स्वर्ण पदक - सुश्री आकृति, महायोगी गोरखनाथ विश्वविद्यालय, बालापार, गोरखपुर।

हाईस्कूल-इण्टर के श्रेष्ठतम विद्यार्थी का महाराणा मेवाड़ स्वर्ण पदक - सुश्री प्रज्ञा कुशवाहा, महाराणा प्रताप बालिका इण्टर कालेज, गोरखपुर।

सर्वाधिक पुरस्कार पाने वाली संस्था - महाराणा प्रताप बालिका इण्टर कालेज, सिविल लाइन, गोरखपुर ।

श्री गोरखनाथ मन्दिर के प्रकाशन

1.	गोरखदर्शन	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	150.00
2.	महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति ग्रन्थ	डॉ. भगवती प्रसाद सिंह	80.00
3.	नाथ योग	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	10.00
4.	आदर्श योगी	रघुनाथ शुक्ल	40.00
5.	महायोगी गुरु गोरखनाथ एवं उनकी तपस्थली	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
6.	गोरखबानी	रामलाल श्रीवास्तव	110.00
7.	गोरक्षसिद्धान्त संग्रह	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
8.	श्री गोरक्ष वैदिक पूजा पद्धति	वेदाचार्य रामानुज त्रिपाठी	8.00
9.	अमनस्क योग	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
10.	गोरक्ष पद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
11.	विवेक मार्तण्ड		7.00
12.	महार्थ मंजरी		6.00
13.	गोरखचरित्र	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
14.	हठयोग प्रदीपिका	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
15.	सिद्धसिद्धान्तपद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	25.00
16.	योग रहस्य	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	25.00
17.	योग बीज	रामलाल श्रीवास्तव	6.00
18.	शाबर चिंतामणि	नित्यनाथ सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ	7.00
19.	योगी सम्प्रदाय (नित्यकर्म संचय)		90.00
20.	गोरख चालीसा		2.00
21.	नाथसिद्ध चरितामृत	रामलाल श्रीवास्तव	70.00
22.	नाथ पंथ गढ़वाल के परिप्रेक्ष्य में	विष्णुदत्त कुकरेती	30.00
23.	अमरकाया महायोगी गोरखनाथ	श्रीमती माया देवी	10.00
24.	युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ ने कहा था	महन्त योगी आदित्यनाथ	12.00
25.	गोरखनाथ और नाथसिद्ध	डॉ. अनुज प्रताप सिंह	130.00
26.	गोरक्षदर्शन	विजय पाल सिंह	40.00
27.	तन प्रकाश	श्री श्री 108 बाबा चुन्नीनाथ जी	20.00
28.	हठयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
29.	यौगिक षट्कर्म	महन्त योगी आदित्यनाथ	21.00
30.	नाथ सिद्धों का तात्त्विक विवेचन	अनुज प्रताप सिंह	70.00
31.	गोरखमहिमा	महेन्द्र नाथ गोस्वामी	30.00
32.	सुभाषित त्रिशती	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
33.	राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महन्त अवेद्यनाथ (3 खण्ड)	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	1100.00
34.	राजयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
35.	Philosophy of Gorakhnath	A.K. Banerjee	175.00
36.	The Nath-Yogi Sampradaya and The Gorakhnath Temple		3.50
37.	An Introduction to Nath-Yoga	A.K. Banerjee	15.00
38	महन्त अवेद्यनाथ स्मृति ग्रन्थ	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	600.00
39	योगिराज बाबा गम्भीरनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	500.00
40	योग एवं महायोगी गोरखनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	175.00
41	महायोगी गुरु श्रीगोरखनाथ		40.00
42	श्रीगोरखनाथ मन्दिर एवं गोरखपुर का इतिहास		40.00
43	योगिराज बाबा गम्भीरनाथ		40.00
44	युगद्रष्टा महन्त दिग्विजयनाथ		50.00
45	राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ		50.00

ए.पी./जी.आर-125/14 ए.पी./29075/76

परम पवित्र तुलसी के
औषधीय उपयोग

तुलसी का पौधा परम पवित्र है। सहस्रों वर्षों से हिन्दू तुलसी की उपासना करते आ रहे हैं। तुलसी को हम मन्दिरों के सम्मुख तो लगाते ही हैं, घरों में भी तुलसी का रोपण कर अपने को धन्य समझते हैं। तुलसी में सभी देवों का निवास है। तुलसी से जल पवित्र हो जाता है। तुलसी की गन्ध विकारनाशक है।

तुलसी का औषधीय महत्त्व भी है। यह रुचि में कड़वी होती है तथा उष्ण गुणवाली होती है। इसका सेवन करने से छर्दि, शोथ, कृमि आदि नष्ट होते हैं। आयुर्वेद के अनुसार यह हृदय रोगों के लिये हितकारिणी है तथा खाँसी, विष-विकार एवं पसली की पीड़ा को दूर करती है। यह दूषित कफ का नाश करती है, पित्त की वृद्धि को रोकती है तथा कुपित वायु का शमन करती है।

यहाँ तुलसी के कई औषधीय उपयोग दिये जा रहे हैं। चिकित्सकों से परामर्श लेकर उनसे लाभ उठाया जा सकता है-

(१) **गुर्दे की पथरी**- तुलसीदल के रस में मधु मिलाकर सेवन करें।

(२) **गीली खाँसी, सूखी खाँसी तथा दमा**- तुलसी के पत्ते के रसमें मधु और अदरक का रस मिलाकर सेवन करें।

(३) **हिचकी**-छोटी इलायची के दानों को तुलसी के पते के रस में पीसकर चाटे।

(४) **रतौंधी**- श्यामा तुलसी का रस दो-तीन बूँद चौदह दिनों तक आँखमें डाले।

(५) **ज्वर**- तुलसी की पत्ती एक तोला तथा काली मिर्च दस-बारह दाने पीसकर मटर के बराबर गोली बनाये, छाया में सुखाकर दो-दो गोली, तीन-तीन घंटे पर जल के साथ सेवन करे।

(६) **उल्टी**- तुलसी के पत्ते का रस मधु में मिलाकर चाटे।

(७) **अजीर्ण**- तुलसी की सूखी पत्तियों तथा काली मिर्च के चूर्ण का सेवन करे।

(८) **मन्दाग्नि**- तुलसी का पशाङ्ग (सूखा) तथा काली मिर्च दोनों के चूर्ण का सेवन करे।

(९) **हैजे की सामान्य दशा**- तुलसी की पत्ती और काली मिर्च पीसकर सेवन करे।

(१०) **सिरदर्द**- तुलसी के बीजों के चूर्ण का मधु के साथ सेवन करे।

(११) **बच्चों के यकृत की गड़बड़ी**- तुलसीपत्र-रस का सेवन कराये।

(१२) **छोटा घाव**-तुलसी के बीजों को पीसकर लगाये।

(१३) **दाँत-दर्द**- तुलसीपत्र-रस तथा कपूर को रूई के फाहे से लगाये।

(१४) **सूजन**-तुलसीपत्र-रस लगाये।

(१५) **बच्चों का पेट दर्द**- तुलसी के पत्तों एवं अदरक के रसका सेवन कराये।

(१६) **बच्चों का कान-दर्द**- तुलसीपत्र-रस(गुनगुना) कान में डाले।

(१७) **बच्चों का पेट फूलना**- तुलसीदल और पान के पत्ते का रस (गुनगुना) पिलाये। इससे पेट साफ होता है और अफारा में बहुत लाभ होता है।

(१८) **बच्चों का दाँत निकलना**- तुलसी के पत्तों का रस मधु में मिलाकर मसूड़ों पर मले तथा थोड़ा चटाये। इससे दाँत आसानी से निकलते हैं।

(१९) **लू लगने की दवा**- तुलसी के पत्तों का रस चीनी मिलाकर पीये।

(२०) **अनावश्यक रज-स्राव**- तुलसी की जड़ का चूर्ण पान में रखकर खिलाने से लाभ होता है।

(२९) **चक्कर आना**- तुलसी के पत्तों के रस में चीनी मिलाकर चाटे।

(२२) **प्रसव पीड़ा**- तुलसी के पतों का रस पिलाये।

(२३) **मूत्रदाह**- मूत्रदाह में तुलसीदल चबाये।

(२४) **मुख के छाले**- तुलसीदल और चमेली की पत्तियाँ चबाये।

(२५) **प्रदर**- तुलसीपत्र-रस दो तोला चावल के माँड़ में मिलाकर पीये। सात दिनमें लाभ होगा। दवा के सेवन के समय दूध-भात खाये।

(२६) **शीघ्रपतन**-दो तुलसीदल और थोड़ा तुलसी बीज पान में रखकर खाये।

(२७) **प्लेग की दवा**- तुलसीबीज, काली मिर्च के साथ खाएं।

(श्रीभागवतजी पाण्डेय 'सुधांशु')

प्रकाशक :
गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर-२७३०१५
web: www.gorakhnathmandir.in | E-mail: gorakhnathmandir@yahoo.com
दूरभाष: (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४, फैक्स: ०५५१-२२५५४५५